१ गोम्मटेश्वर की मूर्ति

मैसूर सरकार

श्रवणबेळगोळ

पुरातत्त्व-विभाग
मैसूर

संशोधित द्वितीय संस्करण
१९५३

मुद्रक
बी. एच. रामराव, बी. एससी.,
मैसूर प्रिंटिंग एन्ड पब्लिशिंग हाउस
मैसूर

श्री अ. गो. रामचन्द्रराव
कानून और शिक्षा-मन्त्री
मैसूर राज्य

(मुकाम) मैसूर
२–३–१९५३

मैसूर राज्य का श्रवणबेळगोळ एक अखिल भारतीय जैन-तीर्थ है। यहाँ की गोम्मटेश्वर की मूर्ति विश्व भर में अनेक दृष्टियों से अनोखी है। इस स्थान पर कई बरसों में सम्पन्न होनेवाले महामस्तकाभिषेकोत्सव के अवसर पर सहस्रों यात्री भारत के कोने कोने से आते हैं। यह स्थान जैन एवं जैनेतरों के लिए दर्शनीय है। श्रवणबेळगोळ के मन्दिर, स्थापत्य-कला, शिला-लेख तथा अन्य पुरातत्त्वीय सामग्री सब के लिए उपादेय है। यहाँ भारत के प्रथम सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य के संबंध में कुछ प्रमाण उपलब्ध हैं। इसलिए यह स्थान ऐतिहासिक महत्त्व का है।

आशा है कि मैसूर राज्य के पुरातत्त्व-विभाग से प्रकाशित इस हिंदी पुस्तिका से सारे भारत का लाभ होगा।

अ. गो. रामचन्द्रराव

भूमिका

मैसूर राज्य के पुरातत्त्व-विभाग की ओर से श्रवणबेळगोळ तथा उसके समीपवर्ती पुरातत्त्वीय स्थान और अवशेष एवं शिला-लेखों की पूर्ण रूप से छानबीन और जाँच की गयी है। इनका विवरण स्वर्गीय रावबहदुर श्री रा० नरसिंहाचार्य द्वारा संपादित एपिग्राफिया कर्नाटिका की संवर्धित दूसरी जिल्द में उपलब्ध है। इस ऐतिहासिक स्थान के दर्शनाभिलापी यात्रियों के मार्गदर्शन के लिए पुरातत्त्व-विभाग के तत्कालीन प्रधान स्वर्गीय डाक्टर मैसूर हट्टि कृष्ण द्वारा सन् १९४० ई० में प्रथमतः एक पुस्तक अंग्रेजी में प्रकाशित हुई थी। आवश्यक संशोधन के साथ इस पुस्तक का अंग्रेजी में तीसरा संस्करण अब प्रकाशित हुआ है। इसका हिंदी अनुवाद मैसूर विश्वविद्यानिलय के हिंदी-विभाग के प्रधान तथा मैसूर महाराजा कालेज के हिंदी प्राध्यापक श्री ना० नागप्पा, एम० ए द्वारा किया गया है।

मैसूर
२८–२–५३

क० नारायण अय्यंगार
प्रधान, पुरातत्त्व-विभाग

विषय-सूची

I भूमिका

II इन्द्रगिरि

III चंद्रगिरि

IV श्रवणबेळगोळ ग्राम

V आसपास के गाँव

चित्र-सूची

२ श्रवणबेळगोळ का नक्शा

श्रवणबेळगोळ

I

भूमिका

श्रवणबेळगोळ १२° ५१′ उत्तरी अक्षांश और ७६° २९′ पूर्वी रेखांश पर स्थित है। मैसूर राज्य के हासन जिले में चन्नराय-पट्टण एक ताल्लुका है। श्रवणबेळगोळ वहाँ से दक्षिण-पूर्व में आठ मील की दूरी पर है। विशाल मैदान में, ऊँचाई में एक दूसरे से होड़ करते हुए, दो पथरीले पहाड़ अपना सिर ऊँचा किये खड़े हैं। इनकी घाटी में एक सुंदर गाँव बसा हुआ है। यही श्रवणबेळगोळ है। "इस प्रकार की ऐतिहासिक महत्ता एवं प्राकृतिक रमणीयता का सुखद संगम इस सुंदर मैसूर राज्य भर में अन्यत्र शायद ही देखने को मिले"।

(i) स्थान और मार्ग

बेंगळूर से श्रवणबेळगोळ ९९ मील की दूरी पर है। हासन और मैसूर से भी श्रवणबेळगोळ तक बसें बराबर जाती हैं। इस गाँव का फ़ासला हासन से ३१ मील और मैसूर से ६२ मील है। जिला-बोर्ड की सड़कें होळेनरसीपुर, तिपटूर, अरसीकेरे और पांडवपुर स्टेशनों से श्रवणबेळगोळ तक जाती हैं। श्रवणबेळ-गोळ इन स्टेशनों से क्रमशः २२ मील, ४० मील, ४२ मील और ४८ मील दूर है।

श्रवणबेळगोळ जानेवाली ये सब सड़कें चेन्नरायपट्टण से

होती हुई जाती हैं। इस प्रदेश से हो कर गाँव की ओर जाते हुए, यात्रियों को दक्षिण-पूर्व की तरफ़ कुछ मीलें पर एक पहाड़ खड़ा दीखता है। उसके ऊपर पहले तो एक खंभा जैसा कुछ दिखाई पड़ता है, जो निकट पहुँचने पर एक विशाल मनुष्याकार शिलामूर्ति में बदल जाता है। चारों तरफ़ कोसों दूर से यात्रियों की दृष्टि आकर्षित करनेवाली गोम्मटेश्वर की यह शिला-मूर्ति असाधारण और अनोखी है। सच तो यह है कि यह मूर्ति अपने ढंग की एक ही है। इस प्रदेश में इसको देखते ही श्रवणबेळगोळ का पता लग जाता है। इतिहासज्ञों को विश्वस्त रूप से विदित हुआ है कि दक्षिण में यह स्थान प्रायः भारतीय इतिहास के अति प्राचीन काल से ही जैनियों का प्रधान तीर्थ रहा है। प्रेक्षकों की सुविधा के लिये इस गाँव में दूसरी श्रेणी का एक डाक-बंगला बनवाया गया है। इसमें यात्रियों को काफ़ी आराम रहता है। इस डाक-बंगले का रसोईघर भारतीय ढंग का है। और यहाँ बर्तन की भी सुविधा है जिससे यात्री भोजन बना ले सकते हैं। किंतु यात्रियों को स्वयं भोजन की सामग्री ख़रीदनी पड़ती है। गाँव में कुछ होटल भी हैं जहाँ शाकाहारी भोजन (सब्ज़ी खाना) मिलता है। डाक-बंगले के पास एक अस्पताल भी है।

जैन-संन्यासियों को श्रवण अथवा श्रमण कहते हैं। गोम्मटेश्वर भी एक श्रवण अथवा सिद्ध पुरुष हुए हैं। जिस स्थान पर उनकी महान् शिला-मूर्ति है उसका नाम श्रवणबेळगोळ पड़ा। इसके अतिरिक्त

(ii) नाम की व्युत्पत्ति

दो और बेळगोळ (श्वेत कुंड) प्रसिद्ध हैं जिनको यहाँ के लोग हळे बेळगोळ (प्राचीन बेळगोळ) और कोडि बेळगोळ कहते हैं। (कोडि कन्नड में वह नाला होता है जिससे हो कर तालाब भरने पर अतिरिक्त जल बह जाता है) कन्नड में बेळ का अर्थ श्वेत है और कोळ का अर्थ कुंड है। इन दो शब्दों के संयोग से बेळ्गोळ या बेळगोळ (श्वेत कुंड) बना होगा। इस गाँव के बीच में एक सुंदर कुंड है भी। शिला-लेख में भी इस स्थान के तीन नाम मिलते हैं—श्वेत सरोवर, धवल सरोवर और धवल सरस। कदाचित् ये तीनों संस्कृत-शब्द पर्यायवाची कन्नड शब्द का भाषांतर हों। शिला-लेखों के उपलब्ध नामों से हमारा अनुमान दृढ़ होता है कि बेळगोळ (श्वेत कुंड) बेळ् (श्वेत) और कोळ (कुंड) के योग से बना है। कुछ शिला-लेखों में इस स्थान के नाम बेळ्गुळ, बेळगुळ और बेळुगुळ पाये जाते हैं। किंवदंती है कि प्राचीन काल में एक वृद्धा भक्तिन ने गुळ्ळकायि (बैंगन जाति का एक जंगली कँटीला फल) नामक एक छोटे से फल में गाय का दूध लाकर उसका गोम्मटेश्वर की महान् शिला-मूर्ति के सारे शरीर पर अभिषेक किया और उसी थोड़े दूध से दुग्ध-धारा बह निकली। संभव है कि 'बिळिय गुळ्ळ' (उजला गुळ्ळ फल : solanum ferox) शब्द से इस स्थान के नाम का संबंध हो। कुछ शिला-लेखों में देवर बेळगोळ (भगवान् का श्वेत कुण्ड) और गोम्मटपुर (गोम्मटेश्वर का नगर) नाम भी मिलते हैं। उधर के कुछ प्रामाणिक लेखों में इस स्थान को दक्षिण-काशी तक कहा गया है।

मैसूर राज्य के पुरातत्त्व-विभाग की ओर से इस प्रदेश में लगभग पाँच सौ जैन शिला-लेखों का संग्रह हुआ है जिसका उल्लेख एपिग्राफ़िया कर्नाटिका की दूसरी जिल्द में मिलता है। उपर्युक्त शिला-लेख ६०० ई० से लेकर १८३० ई० तक के हैं। कुछ शिला-लेख इतने प्राचीन हैं कि उनमें मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त के शासन-काल का उल्लेख मिलता है। इन शिला-लेखों में जैनियों के श्रवण-बेळगोळ में प्रथम आगमन का भी प्रसंग है। कांची के राजा हिमशीतळ ने ७८८ ई० में अकळंक नामक एक प्रसिद्ध विद्वान् को श्रवणबेळगोळ से अपने यहाँ बुलवाया था। इस विद्वान् ने कांचीपुर के बौद्धों को सार्वजनिक शास्त्र-चर्चा में परास्त किया। फलतः उनको दक्षिण भारत छोड़कर लंकाद्वीप जाना पड़ा। इससे जान पड़ता है कि उन दिनों श्रवणबेळगोळ एक प्रसिद्ध विद्या-केन्द्र था। श्री रामानुजाचार्यजी ने (जो वास्तव में एक सफल समाज-सुधारक थे) विष्णुवर्धन होयसळ को वैष्णव मत की दीक्षा दी। कहते हैं कि इस समय जैनियों को बहुत कष्ट दिया गया। पर यह केवल भ्रम है; इस किंवदंती में कोई तथ्य नही। वास्तव में राजास्थान (राज-दरबार) में जैनियों का प्रभाव पूर्ववत् बना रहा; कुछ भी कम न हुआ। हाँ, जैनियों और श्रीवैष्णवों में वैमनस्य अवश्य रहा। विजयनगर-नरेश बुक्कराय के राजत्व-काल में इन दोनों संप्रदायों में समझौता कराया गया। इससे राज्य में धर्म-सहिष्णुता की नीति घोषित की गयी, जो सार्वजनिक स्थानों में

(iii) स्थान का इतिहास

स्थापित शिला-लेखों द्वारा सामान्य जनता तक पहुँचायी गयी।

इस प्रदेश में असंख्य शिला-लेख उपलब्ध हुए हैं। इनमें चन्द्रगिरि पहाड़ की चट्टानों पर खुदे हुए शिला-लेख प्रधान हैं। इनकी लिपि प्राचीन है और अक्षर कई इंच लंबे हैं। अनेक शिला-लेख ऐतिहासिक अनुसंधान के योग्य हैं। इन शिला-लेखों द्वारा गंग राजाओं की उन्नति और उनकी राज-सत्ता की धाक के बारे में अनेक ज्ञातव्य विवरण विदित होते हैं। इतना ही नहीं, राष्ट्रकूट वंश के अंतिम राजा का अन्त होयसळ राज्य की स्थापना एवं वृद्धि, विजयनगर राज्य का सार्वभौमत्व और मैसूर-राज-वंश का शासन—इन बातों पर भी शिला-लेखों द्वारा काफ़ी प्रकाश पड़ता है।

II
इन्द्रगिरि

डाक-बंगले से इन्द्रगिरि पहाड़ जाने के मार्ग में यात्रियों के नेत्रों को आकृष्ट करनेवाली सब से पहली वस्तु एक सुन्दर झील है जिसे यहाँ के लोग 'कल्याणी' कहते हैं। यह झील गाँव के बीच में स्थित है। इसके चारों ओर सोपान बने हुए हैं। बाहर चारों ओर चहारदीवारी है जिसमें चार द्वार हैं। द्वारों पर गोपुर बने हैं। झील के उत्तर में एक बड़ा मंडप है जिसमें कई स्तंभ हैं। इनमें से एक स्तंभ पर खुदे हुए शिला-लेख से मालूम होता है कि श्रीमान् चिक्कदेव-राजेन्द्र ओडेयर ने यह झील बनवायी थी। मंडप की छत और धरनों पर किसी समय कई रंगीन चित्र रहे होंगे। आज उनके चिह्न मात्र कहीं कहीं दिखाई पड़ते हैं। अनन्त कवि के गोम्मटेश्वर-चरित में लिखा है कि श्री चिक्कदेवराज ओडेयरने अपने टंकशालाध्यक्ष श्री अण्णय्या की प्रार्थना पर इस झील के बनवाने की आज्ञा दी। पर उसके पूर्ण होने के पहले ही राजा का स्वर्गवास हो गया। उसके बाद उनके पोते श्रीमान् कृष्णराज ओडेयर प्रथम के राजत्व-काल (१७१३ ई०–१७३१) में श्री अण्णय्या ने झील बनवाने का कार्य पूरा किया। कहा जाता है कि इस झील से ही गाँव का नाम श्रवणबेळगोळ पड़ा। सातवीं शताब्दी के शिला-लेखों में भी यही नाम पाया जाता है। अतः हमारी धारणा है कि झील पहले भी थी; श्रीमान् चिक्कदेवराज ओडेयर की आज्ञा से उसके घाट, द्वार तथा गोपुर (शिखर या कलश) आदि बनवाये गये।

१ कल्याणी (झील)

इन्द्रगिरि पहाड़, जिसे यहाँ के लोग दोड्ड बेट्ट (अथवा बड़ा पहाड़) कहते हैं, तलहटी के मैदान से ४७० फुट और समुद्रतल से ३,३४७ फुट ऊँचा है। यह पहाड़ अंडाकार है। इसका बड़ा व्यास लगभग चौथाई मील लंबा है। इस पहाड़ का दूसरा नाम विन्ध्यगिरि है। क़रीब पाँच सौ सीढ़ियाँ चढ़ आने के बाद यात्री पहाड़ पर पहुँचते हैं। ये सीढ़ियाँ एक मात्र कड़ी शिला काट कर बनवायी गयी हैं। पहाड़ पर चढ़ते समय जो प्राचीन वस्तुएँ जिस क्रम से दृष्टिगोचर होती हैं उनका परिचय उसी क्रम से नीचे दिया जाता है।

२ ब्रह्मदेव-मंदिर

पहाड़ की तलहटी में थोड़ी ऊँचाई पर एक छोटा मंदिर दिखाई देता है। इसमें लाल रंग से पुता हुआ एक चपटा पत्थर है जिसकी कोई शकल-सूरत नहीं है। इसे यहाँ के लोग ब्रह्म अथवा जारुगुप्पे अप्पा कहते हैं। हिरिसाळि (ग्राम) के रहनेवाले गिरि-गौडा के छोटे भाई रंगय्या ने यह मंदिर क़रीब १६७९ ई० में बनवाया। परन्तु मंदिर की अटारी इधर की बनी हुई है जिसमें पार्श्वनाथ स्वामी की एक मूर्ति रखी हुई है।

३ चौबीस तीर्थंकर बस्ती

इन्द्रगिरि पहाड़ की चोटी पर पत्थर की प्राचीर-दीवार का घेरा है। इस घेरे के अंदर बहुत से प्राचीन मंदिर हैं। प्राचीर-दीवार के अंदर प्रवेश कीजिये तो सर्वप्रथम एक छोटा मंदिर दिखाई पड़ता है, जिसे "चौबीस तीर्थंकर बस्ती" कहते हैं। (कन्नड भषा में जैन-मंदिर को

बस्ती कहते हैं) इस मंदिर के भीतर एक गर्भगृह और उसी से लगा हुआ एक दूसरा गृह है (जो कन्नड में सुखनासि कहलाता है)। सुखनासी से लगा हुआ एक द्वार-मंडप है। इसमें एक शिला-पटिया पर नीचे की पंक्ति में तीन मूर्तियाँ खड़ी की गयी हैं। उनके ऊपर इक्कीस छोटी-छोटी मूर्तियाँ गोलाकार प्रभामंडल में बिठाई हुई हैं। इस प्रकार की शिला या काठ की पटिया को कन्नड में प्रभावळि या प्रभामंडल कहते हैं, जो देवी-देवताओं के तेजोमंडल का द्योतक होती है। चारुकीर्ति पंडित, धर्मचंद्र आदि महानुभावों ने १६४८ ई० में चौबीस तीर्थंकरोंवाले इस विग्रह की स्थापना की।

चौबीस तीर्थंकर बस्ती के पश्चिम में दक्षिण-पश्चिम की तरफ़ थोड़ी दूर पर एक कुण्ड पडता है। इसे कन्नड में दोणे कहते हैं। (संभव है कि यह शब्द संस्कृत भाषा के द्रोणी शब्द से निकला हो) इस समय यही कुण्ड पहाड़ पर प्रधान जलाशय का काम देता है।

४ चेन्नण्ण बस्ती

पश्चिम की तरफ़ कुण्ड (दोणे) के पास एक मंदिर है जो चेन्नण्ण बस्ती के नाम से प्रसिद्ध है। मंदिर में एक गर्भगृह है। मंदिर के द्वार पर द्वारमंडप है और भीतर ओसारा है। गर्भगृह के अंदर अष्टम तीर्थंकर चंद्रनाथ की बिठाई हुई मूर्ति की पूजा होती है। मंदिर के सामने एक मानस्तम्भ खड़ा किया गया है। (जैन देवालयों के सामने खड़े किये गये ऊँचे स्तम्भों को मानस्तम्भ कहते हैं) चेन्नण्ण ने लगभग १६७३ ई० में यह मंदिर बनवाया। ओसारे

४ त्यागद् ब्रह्मदेव-स्तम्भ पर स्थित चामुण्डराय-विग्रह

के दो स्तम्भों पर आमने-सामने एक पुरुष और एक स्त्री की दो मूर्तियाँ खुदी हुई हैं। ये मूर्तियाँ भक्ति-भाव से हाथ जोड़े हुए हैं। संभव है, ये मूर्तियाँ चेन्नण्ण और उसकी पत्नी की हों। मंदिर के बाहर उत्तर-पूर्व की ओर दो कुण्ड और हैं जिनके मध्य में स्तम्भों से सुशोभित एक सभामंडप विद्यमान है।

प्राकार के अंदर एक ऊँचा चबूतरा बना हुआ है। चबूतरे की दीवारों में शिला की टेकें तिरछी लगायी गयी हैं। इन शिला-टेकों को कन्नड में ओदेगल कहते हैं।

५. ओदेगल बस्ती

(ओदेगल शब्द में 'ओ' और 'दे' का ह्रस्व उच्चारण होता है) इसी कारण से चबूतरे पर बने हुए इस मंदिर का नाम ओदेगल बस्ती पड़ा है। ऊँचे चबूतरे पर बने हुए इस मंदिर तक चढ़ने के लिये सीढ़ियों की एक लंबी कतार है। इस मंदिर के तीनों गर्भगृहों के द्वार भिन्न भिन्न दिशाओं में हैं। इसीलिये इस मंदिर को त्रिकूट बस्ती भी कहते हैं। यह होयसळ-काल का मंदिर है; और कड़े पत्थर से बना हुआ है। मंदिर का बाहरी भाग बिलकुल सादा दीखता है। मंदिर के अंदर तीन गर्भगृह हैं जिनसे लगे हुए तीन खुले गृह हैं। ये ही सुखनासियाँ हैं। तीनों गर्भगृहों से बाहर निकलकर इन गृहों से होते हुए यात्री लोग मंदिर के बड़े रंगमंडप में पहुँचते हैं। इस रंगमंडप को कन्नड में नवरंग कहते हैं। मंदिर के प्रवेश-द्वार पर एक द्वारमंडप बना है जो मुखमंडप के नाम से प्रसिद्ध है। नवरंग में बेलनाकार के खंभे लगे हुए हैं। इसकी छत

के मध्य-भाग में एक बहुत ही सुन्दर कमल लटका हुआ है। प्रधान गर्भगृह में आदिनाथ का विग्रह है जिसकी पीठ से लगा हुआ एक सुन्दर प्रभा-मंडल है। यह कलापूर्ण संगतराशी का एक अच्छा नमूना है। विग्रह के दोनों पार्श्वों में चँवर-वाहक खड़े किये गये हैं। दाहिने पार्श्ववाले गर्भगृह में नेमिनाथ की प्रतिमा विराजमान है। बायें भाग में बने हुए गर्भगृह में नेमिनाथ की मूर्ति रखी है। आदिनाथ अथवा वृषभेश्वर सारे विश्व के प्रथम सम्राट् हुए जो पीछे चल कर सर्वप्रथम जिन बने। गोम्मटेश्वर उन्हीं के पुत्र हैं।

जिस भीतरी परकोटे के अंदर गोम्मटेश्वर की मूर्ति स्थापित है उसके बाहर और मूर्ति के सम्मुख एक ऊँचा शिला-स्तम्भ खड़ा किया गया है। स्तम्भ की भव्य खुदाई देखते ही बनती है। यह स्तम्भ त्यागद ब्रह्मदेव-स्तम्भ के नाम से प्रसिद्ध है।

६ त्यागद ब्रह्मदेव-स्तंभ

इस स्तम्भ पर ऊपर से निकलती हुई सी चार लताएँ काढ़ी गई हैं। ये लताएँ खम्भे के चारों ओर गई हैं और उसे घेरे हुए सी हैं। खंभा बेलनाकर का है। लता के हर एक घेरे के बीच में सुन्दर खिला हुआ पत्ता या फूल कढ़ा हुआ है। कहा जाता है कि यह कलापूर्ण सुंदर शिला-स्तम्भ ऊपर से छत के आधार पर इस अंदाज़ से लटकाया गया था कि स्तम्भ और पादपीठ के बीच में ज़रा सी जगह छुटी थी। इसकी एक ओर से रूमाल ठूँसने पर दूसरी ओर से उसका छोर निकल आता था। पर

वह मंडप जो इस स्तम्भ को थामे हुए है, पीछे का बना हुआ सा है। किंवदंती है कि चामुण्डराय ने ही इस स्तम्भ की स्थापना करायी। यह बात पादपीठ के उत्तरी मुख पर स्थित शिला-लेख से सिद्ध होती है जिसमें चामुण्डराय की युद्ध-यात्राओं का भी प्रशंसापूर्ण वर्णन है। इस शिला-लेख के तिनों तरफ़ के अक्षर मिट गए हैं। केवल एक तरफ़ के अक्षर सुरक्षित होने से सुपाठ्य हैं।

पादपीठ के दक्षिणी मुख पर अनेक मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। उनमें से एक मूर्ति के दोनों पार्श्वों में चँवरधारी अंगरक्षक खड़े हैं। जनश्रुति है कि यह मूर्ति चामुंडराय की है। अन्य विग्रहों में से एक उनके गुरु नेमिचंद्र का भी है। कहते हैं कि इन्होंने अपने शिष्य चामुण्डराय के अध्ययनार्थ गोम्मटसार नामक ग्रंथ रचा था। ये वही चामुंडराय हैं जो गंग-नरेश राजमल्ल के प्रख्यात मंत्री थे। किंवदंती है कि इस स्तम्भ के पास दरिद्रों को दान-दक्षिणा का वितरण हुआ करता था। इसलिए इसका नाम त्यागद ब्रह्मदेव-स्तम्भ (या चागद कम्ब) हुआ।

गोम्मटेश्वर की बृहत्काय मूर्ति प्राचीर-दीवार या परकोटे के अंदर विराजमान है। इस परकोटे में एक बृहत् द्वार है जिसे अखंड या अखंडबागिलु (बागिलु कन्नड में द्वार के अर्थ में चलता है) कहते हैं। इस

७ अखंड-द्वार

द्वार का अधिकांश भाग एक ही अखंड शिला को काट कर बनाया गया है। इसीलिये यह अखंड-द्वार के नाम से प्रसिद्ध है। इसके-

सरदल पर दोनों पार्श्वों में खड़े हुए हाथियों से अभिषिक्त लक्ष्मी की सुन्दर उभरी हुई मूर्ति खुदी है। डेवढ़े के दाहिने पार्श्व में बाहुबली का मंदिर है और बायें पार्श्व में उनके गुरु-भाई भरत का। दोनों मूर्तियाँ बड़ी शिलाओं पर खुदी हुई हैं। जनश्रुति है, चामुण्डराय ने ही इस द्वार को बनवाया था। द्वार के पार्श्ववर्ती विग्रह और देहरी तक लगी हुई सीढ़ियाँ सन् ११३० ई० के क़रीब सेनापति भरतेश्वर कि बनवाई हुई हैं। अखंड-द्वार की दाहिनी तरफ़ एक बड़ा रोड़ा पड़ा है जिसे कन्नड में सिद्धर गुंड्डु (सिद्धों की शिला) कहते हैं। इस पर अनेक सिद्ध पुरुषों की उभरी हुई मूर्तियाँ और कुछ शिला-लेख खुदे हैं। कुछ दूर पर एक और प्रवेश-द्वार है जिसे गुळ्ळकायज्जि (अज्जि कन्नड में नानी को कहते हैं) का द्वार कहते हैं।

गोम्मटेश्वर की मूर्ति के चारों ओर लगे हुए बाहरी परकोटे के द्वार पर दहिनी तरफ़ एक मंदिर है। इसका द्वार पश्चिमाभिमुखी है। यही सिद्धर बस्ती है।

८ सिद्धर बस्ती

सिद्धर बस्ती एक मंदिर है, जिसके अन्दर किसी सिद्ध पुरुष की बैठाई हुई मूर्ति है। विग्रह के दोनों पार्श्वों में लेखों से युक्त दो सुंदर स्तम्भ खड़ किये गये हैं। ये स्तम्भ इतने सुंदर हैं मानों शिल्पकला की सारी शक्ति इनके बनाने में लगा दी गयी हो। इन स्तम्भों के सिरे आकार में सुन्दर कलशों के जैसे हैं। स्तम्भों पर खुदे हुए लेखों में पंडितार्य (मृत्यु १३९८ ई०) एवं

५ गुळ्ळकायज्जि

६ गोम्मटेश्वर :—पार्श्व-दृश्य

श्रुतमुनि (मृत्यु १४३२ ई०) नामक दो जैनाचार्यों के देहान्त पर बनाये गये चरमश्लोक हैं।

सिद्धर बस्ती के ठीक पश्चिम में गोम्मटेश्वर के सम्मुख एक ब्रह्मदेव-स्तम्भ है। स्तम्भ के ऊपरवाले मंडप में ब्रह्मा की मूर्ति विराजमान है। इस मंडप के नीचे गुळ्ळकायज्जि नामक एक स्त्री का विग्रह खड़ा किया गया है। विग्रह पाँच फुट ऊँचा है। इसके हाथ में गुळ्ळायि है; और यह गोम्मटेश्वर के सम्मुख मुँह किये हुए खड़ी है। कहते हैं कि चामुण्डराय ने गोम्मटेश्वर के अभीषेक की बड़ी सजधज के साथ तैयारी की थी। पर अभिषिक्त दूध मूर्ति की जाँघों से नीचे नहीं उतरा। तब गुरुजी के आज्ञानुसार एक वृद्धा भक्तिन के गुळ्ळकायि में लाये हुए थोड़े दूध से अभिषेक किये जाने पर अभिषिक्त दूध का प्रवाह मूर्ति के सारे शरीर को नहला कर समूचे पहाड़ पर बह गया। चामुण्डराय को गोम्मटेश्वर की इस बृहत्काय मूर्ति के बनवाने का गर्व था। कहते हैं, उनके इस गर्व को चूर करने के लिये पद्मावती देवी अभिषेक के समय एक ग़रीब बुढ़िया के वेष में गुळ्ळकायज्जि बन कर आई। पर एक और लोकोक्ति के अनुसार गुळ्ळकायज्जि जैन पुराणों में वर्णित कूष्मांडिनी है। किंवदंती है, चामुण्डराय ने गुळ्ळकायज्जि की इस मूर्ति को यहाँ स्थापित कराया। ऊपर कहा जा चुका है कि कुछ विद्वानों की धारणा के अनुसार इस कारण से गाँव का नाम बेळगोळ हुआ।

९ गुळळकायज्जि

पहाड़ की चोटी पर परकोटे के अन्दर एक खुला आँगन है। आँगन में गोम्मटेश्वर की मूर्ति विराजमान है। इस परकोटे से लगा हुआ एक ओसारा है जिसमें अनेक जैन-संन्यासियों के विग्रह विराजमान हैं। ओसारे के चारों ओर थोड़ी दूरी पर परकोटे की दीवार है। इस दीवार का एक हिस्सा पत्थर की काटी हुई शिलाओं को एक के ऊपर एक रख कर बनाया गया है। दीवार बड़ी मज़बूत है।

१० गोम्मटेश्वर की मूर्ति

(अ) परम्परा

गोम्मटेश्वर संबन्धी परंपरागत दंतकथा का विवरण सन् ११८० ई० के एक शिला-लेख में पाया जाता है। यही विवरण भुजबलि-शतक और भुजबलि-चरित आदि साहित्यिक ग्रंथों में भी कुछ हेरफेर के साथ उपलब्ध है। उपर्युक्त शिला-लेख से विदित होता है कि गोम्मटेश्वर प्रथम तीर्थंकर पुरुदेव के पुत्र हैं और भरत के छोटे भाई हैं। उनका वास्तविक नाम बाहुबलि अथवा भुजबलि है। राज्य के लिये दोनों भाइयों में युद्ध हुआ, जिसमें भुजबलि की विजय हुई। पर उन्होंने युद्ध में पराजित अपने बड़े भाई को बड़ी उदारता से राज्य दे दिया और आप संसार से विरक्त होकर तपस्या करने चल दिये। उन्होंने अपने तपोबल से जितेन्द्रिय होकर वैराग्य-क्षेत्र में सबसे प्रसिद्ध और ऊँचा "केवलि" पद पाया। जैन सिद्धांत के अनुसार केवलि उन संन्यासियों को कहते हैं जिन्हें आत्मा और परमात्मा की निरपेक्ष एकता के ज्ञान

का अनुभव हो। भाई की इस साधना पर मुग्ध हो कर भरत ने पौदनपुर में उनके एक विग्रह की स्थापना करायी। काल पा कर विग्रह के चारों ओर कुक्कट-सर्पों (एक प्रकार के पौराणिक अजगरों) ने अपना घर कर लिया। पीछे चल कर अदीक्षित व्यक्तियों की दृष्टि इस विग्रह को देखने में असमर्थ सिद्ध हुई; केवल दीक्षितों को ही इस विग्रह का दर्शन-लाभ हो सकता था। विग्रह के बारे में सुन कर चामुंडराय उसके दर्शनार्थ निकल पड़े। वे यह यात्रा पूरी न कर सके। इसलिये उन्होंने श्रवणबेळगोळ में एक ऐसी ही मूर्ति की स्थापना करने का मन में संकल्प कर लिया। उन्होंने चन्द्रगिरि पहाड़ पर खड़े हो कर एक तीर मारा जो इन्द्रगिरि पहाड़ पर किसी शिला में जा लगा। इसी शिला में उनको गोम्मटेश्वर के दर्शन हुए। चामुंडराय ने मुनि अरिष्टनेमी की देखरेख में यह महान् मूर्ति बनवाई। उपर्युक्त साहित्यिक ग्रंथों से भी यही दंत-कथा सप्रामाण सिद्ध होती है यद्यपि ज़रा ज़रा सी बातों में भिन्नता अवश्य है।

(आ) समय

शिला-लेखों द्वारा निश्चित रूप से पता चलता है कि गंगवंशीय राजा सत्यवाक्य या राचमल्ल या राजमल्ल (९७४ ई० से ९८४ ई० तक) के मंत्री चामुंडराय ने यह विग्रह बनवाया। जनश्रुति के अनुसार राजमल्ल के शासन-काल में इस मूर्ति की स्थापना की गयी। अत: ९७४ ई० से लेकर ९८४ ई० के बीच में विग्रह की स्थापना हुई होगी। कन्नड भाषा में चमुंडराय-पुराण (९७८ ई०)

काफ़ी लोक-प्रिय ग्रंथ है। रचयिता के साहस का लंबा चौड़ा वर्णन इस ग्रंथ में मिलता है; परन्तु आदि से अन्त तक कहीं भी इस विग्रह की स्थापना का उल्लेख नहीं है। उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष उचित जान पड़ता है कि यह शिला-मूर्ति ९७८ ई० के पश्चात् बनवायी गयी। यदि और अधिक विश्वसनीय प्रमाणों के अभाव में मूर्ति का निर्माण-काल ९८३ ई० ठहराया जाय तो अनुचित नहीं होगा। कई काव्यों के देखने पर निश्चित मालूम होता है कि १०२८ ई० अथवा कलि (कल्कि) संवत् ६०० में तदनुसार विभव संवत्सर के चैत्र शुद्धा पंचमी रविवार के दिन चामुंडराय के हाथों इस मूर्ति की स्थापना की गयी।

(इ) वर्णन

बड़े पहाड़ की चोटी पर खड़ी हुई गोम्मटेश्वर की यह नग्न मूर्ति उत्तराभिमुखी है। इस महान् शिला-मूर्ति की भुजाएँ विशाल हैं। दोनों हाथ नीचे की तरफ़ सीधे बढ़ाये हुए हैं और उँगलियाँ खुली हैं। कमर पतली है। मूर्ति के क़द के लिहाज़ से, घुटनों के नीचे टाँगें ज़रा नाटी और मोटी हो गयी हैं। जाँघों के ऊपर सारा शरीर किसी आधार के बिना ही खड़ा है। घुटनों के दोनों तरफ़ पत्थर के बमेठे हैं। इन बमेठों में से साँप निकलते हुए से उत्कीर्ण किये गये हैं। दोनों जाँघों और हाथों से लिपटी हुई माधवी लता शिल्प-चातुर्य का उत्तम उदाहरण है। यह लता हाथ के ऊपर तक गयी है और वहाँ उसमें फल-फूल

काढ़े गये हैं। विग्रह का पादपीठ कमलासन के आकार का है। जिसका कमल खिला हुआ है। हल्के भूरे और महीन कणों वाली कड़ी शिला को काट कर यह समूचा विग्रह बनाया गया है। यह शिलामूर्ति इतनी स्वच्छ और सजीव है कि मानों कारीगर ने काम के बाद अपनी टाँकी अभी-अभी धर दी हो। कदाचित् पहाड़ पर पहले से स्थित एक बड़ी शिला को ही काट कर यह विग्रह बनवाया गया हो; क्योंकि मूर्ति के बृहदाकार को देखते हुए अंडाकार पहाड़ के नीचे से ऊपर तक इतनी बड़ी और कड़ी शिला का पहुँचाना असंभव प्रतीत होता है। स्थान-वैशिष्ट्य और आकार की महत्ता की दृष्टि से गोम्मटेश्वर की यह महान् शिला-मूर्ति मिश्रदेश के रैमसेस राजाओं की मूर्तियों से भी बढ़ कर अद्भुत एवं आश्चर्यजनक सिद्ध होती है। इतना महान् अखंड शिला-विग्रह संसार में अन्यत्र कहीं भी उपलब्ध नहीं है। गोम्मटेश्वर की दो और विशालकाय शिला-मूर्तियाँ विद्यमान हैं—एक कर्नाटक प्रान्त के अन्तर्गत दक्षिण कन्नड जिले के कार्कळ नामक स्थान में है, दूसरी मूर्ति उसी जिले के एणूर नामक गाँव में। कार्कळवाली मूर्ति १४३२ ई० में स्थापित की गयी; इसकी ऊँचाई ४१ फुट ५ इंच है। एणूर का विग्रह १६०४ ई० में स्थापित किया गया; वह ३५ फुट ऊँचा है। एणूर वाली मूर्ति को बेळगोळ के चारुकीर्त्ति पंडित की प्रेरणा से चामुंड-वंश के तिम्मराज ने बनवाया। ये दोनों मूर्तियां श्रवणबेळगोळ वाली मूर्ति के समान ही बनायी गयी हैं। पर शक्ल-सूरत से भिन्न हैं।

ताल्लुका मैसूर के इलवाल के पास श्रवणगुड्ड में एक पथरीले टीले पर २०' (बीस फुट) लंबी गोम्मट की एक और मूर्ति है और अन्य मूर्तियों के जैसे इसकी भी जांघों और हाथों को लिपटी हुई एक लता है। दोनों हाथ फन फैलाये हुए सर्पों पर टिकाये गये हैं। मालूम नहीं कि यह मूर्ति कब किसने बनवायी। श्रवणबेळगोळ का विग्रह वास्तव में सबसे प्राचीन, बड़ा और सुन्दर है।

(ई) अंगों की माप

इस बृहत्काय विग्रह के भिन्न भिन्न अंगों की माप नीचे दी जाती है—

	फुट	इंच
मूर्ति की कुल ऊँचाई	५८	०
कर्ण के अधोभाग तक की ऊँचाई	५०	०
कर्ण के अधोभाग से मस्तक तक (क़रीब)	६	६
चरण की लंबाई	८	३
पाँव के अँगूठे की लंबाई	२	९
जंघे के ऊपरी भाग की आधी गोलाई	१०	०
पेड़ू की चौड़ाई	१३	०
कमर की चौड़ाई	१०	०
कंधों के बीच छाती की चौड़ाई	२३	७½
स्कन्धमूल से कर्णमूल तक	२	६

	फुट	इंच
तर्जनी उँगली की लंबाई	३	९
मध्यमा उँगली की लंबाई	५	०
अनामिका उँगली की लंबाई	४	८
कनिष्ठिका उँगली (छिगुनी) की लंबाई	३	२

इस कलामय विग्रह की कारीगरी को देख कर भला कौन मुग्ध नहीं होगा? शिल्पी को धन्य है जिसने शिल्प-कला के चरमोत्कर्ष का ऐसा सफल और सुन्दर नमूना जनता के सम्मुख रखा है। इसके मुख को उत्कीर्ण करने में मानों आलेख्य-कला की सारी शक्ति का उपयोग कर दिया गया है। मुख अन्य सब अंगों से सुन्दर है। इसकी गंभीर मुखाकृति से ध्यानावस्थित दशा की इतनी सुन्दर अभिव्यक्ति होती है कि प्रेक्षक इसे देख कर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। होंठों पर ज़रा-सी मुसकान की हल्की रेखा झलकती है; ऐसा लगता है मानों गोम्मटेश्वर इस संसार के जीवन-संग्राम को स्मित-मिश्रित गांभीर्य से निहार रहे हैं। शिल्पी ने जैन धर्म के संपूर्ण त्याग की भावना को इस मूर्ति के सधे हुए प्रत्येक अंग में अपनी छेनी से पूर्णतया भर दी है। मूर्ति की नग्नता जैन धर्म के संयम एवं सर्वत्याग की भावना का प्रतीक है। एकदम सीधे खड़े और मस्तक ऊँचा किये इस विग्रह का अंग-विन्यास संपूर्ण आत्मनिग्रह को सूचित करता है। होंठों की दया-

(उ) मूर्ति की कला

मयी मुसकान से आत्मानंद और दुखी दुनिया के साथ सहानुभूति की भावना प्रगट होती है। शारीरिक गठन संबन्धी कुछ त्रुटियों के होते हुए भी समूचा विग्रह बड़ा शानदार और प्रभावशाली बन पड़ा है। फर्गुसन साहब का कथन है: "मिश्र को छोड़ कर संसार भर में अन्यत्र कहीं इस (मूर्ति) से अधिक महान् एवं प्रभावशाली मूर्ति नहीं है; और यहाँ (मिश्र में) भी (अब तक) ज्ञात कोई भी मूर्ति इससे अधिक ऊँची नहीं है।" इस महान् विग्रह की शान और सौंदर्य पर मुग्ध हो कर कन्नड भाषा के कितने ही प्राचीन तथा अर्वाचीन कवियों ने अपनी सुंदर कविताओं द्वारा मूर्ति का गुण-गान किया है। गोम्मटेश्वर की शिला-मूर्ति के समीपवर्ती समतल मैदान पर खड़े हो कर चारों तरफ़ नज़र दौड़ाइये तो चालीस मील की परिधि तक अतीव सुंदर दृश्य आपके नेत्रों को निमंत्रित करते हुए से दिखाई देते हैं। जिस दिन आकाश निर्मल एवं मेघरहित हो, उस दिन पहाड़ पर खड़े हो कर दूरबीनों से देखने पर अनेक प्रसिद्ध स्थानों को पहचान सकते हैं। सूर्योदय और सूर्यास्त के समय चाँदनी-रात और तारों की टिमटिमाती ज्योति को लिये हुए रात की अंधियारी में इस तीर्थ की रमणीयता निराली होती है।

गोम्मटेश्वर का मस्तकाभिषेकोत्सव कई वर्षों में हुआ करता है। इस उत्सव की तैयारी में बहुत सा धन खर्च

(ऊ) मस्तकाभिषेक

होता है। उपलब्ध प्रमाणों से विदित होता है कि यह समारोह प्रथमतः १३९८ ई० में संपन्न हुआ था; इधर पिछला उत्सव १९४० ई० में मनाया गया। एपिग्रैफ़िया कर्नाटिका की दूसरी जिल्द के १८ वें और १९ वें पृष्ठों पर १८८७ई० के अभिषेक के संबंध में वर्णित निम्नलिखित बातें यहाँ उद्धृत की जाती हैं:--

"गत १४ वीं मार्च को गोम्मटेश्वर का मस्तकाभिषेकोत्सव संपन्न हुआ। इस पुण्य-पर्व की बड़ी प्रतीक्षा थी। उत्सव के उपलक्ष्य में भारत के सभी भागों से आये हुए २०,००० के लगभग यात्रियों का समारोह था। सुदूर बंगाल और गुजरात से भी अनेक भक्त आये थे। तमिळवालों की तो बेशुमार संख्या थी। उत्सव के पूरे एक मास पहले ही कुछ यात्री आ गये। उत्सव के दिन तक भक्तों की भीड़ आती रही। एक मास पूर्व से सभी देवालयों में रोज़ पूजा होने लगी; इसके अलावा, गोम्मटेश्वर की मूर्ति और पादपीठ की भी पूजा होती रही। उत्सव के दिन सूर्योदय के पहले से लोगों की कतारें पहाड़ पर चढ़ती हुई देखी गयीं। ये लोग आपस में होड़ लगा कर ऐसी जगह पर पहुँचने का प्रयत्न कर रह थे जहाँ से वे पूरा समारोह अच्छी तरह देख सकें। भीड़ में स्त्रियों और लड़कियों की भी काफ़ी संख्या थी। उन्होंने नूतन वस्त्र और आभूषण धारण करके हाथ में मिट्टी या पीतल की कलशियाँ लिये हुए थीं। प्रातःकाल के दस बजे तक

मंदिर के प्राकार में लोगों की इतनी भीड़ लगी कि तिल धरने की भी जगह न बची थी। मूर्ती के सामने ४० वर्ग-फुट के विस्तार वाली पीले धान की चौकी बनायी गयी। इस पर आम्रपत्रों और नारियल के फलों से युक्त मिट्टी के बने और रंगे हुए एक हज़ार जल-कुंभ रखे गये। शिला-मूर्ति के चारों ओर बाँस की मचान लगी हुई थी। यह मचान मूर्ति से भी ऊँची थी। इस पर कई पुरोहित खड़े थे। उनके पास घी, दूध तथा अभिषेक की अन्य सामग्रियों से भरे कलश रखे थे। उत्सव के प्रधान पुरोहित कोल्हापुर-स्वामी की आज्ञा पाते ही सब पुरोहितों ने एक साथ कलश उठा कर पल भर में गोम्मटेश्वर का मस्तकाभिषेक किया। यह तो प्रारंभिक अभिषेक हुआ; दिन के दो बजे महाभिषेक होनेवाला था। नाना प्रकार के वाद्यों के घोष के साथ पुरोहित मंत्रोच्चारण करने लगे। अभिषेक का मुहूर्त लगते ही विग्रह के सामनेवाली चौकी पर रखे हुए सहस्र कलश क्षण भर में जादू की तरह मचान पर पुरोहितों के हाथों में पहुँचा दिये गये। इनसे विग्रह का अभिषेक किया गया। भक्त लोग इस शुभ-मुहूर्त पर उत्सव में सम्मिलित हो कर अपना भाग सराहने लगे। वे अभिषेक देखते-देखते मंत्रमुग्ध से हो कर अपने अपने ढंग से जय-जयकार करने लगे। उत्तर भारतीयों ने "जय जय महाराज" का नारा बुलंद किया। उपर्युक्त वाद्यों, मंत्रों तथा जय-जयकार के साथ दक्षिणियों की "आहा! आहा!" की आवाज़ मिल गयी और सारा प्रांत इस ध्वनि से भर गया। अंतिम अभिषेक में इन पन्द्रह वस्तुओं

७ गोम्मटेश्वर : पीछे का दृश्य

८ गोम्मटेश्वर की दाहिनी तरफ़ के चामर-ग्राहक

का उपयोग किया गया—जल, नारियल की गरी, केला, गुड़, घी, चीनी, बादाम, खजूर, खसखस, दूध, दही, श्रीगन्ध, सुवर्ण पुष्प, रजत पुष्प और चाँदी के सिक्के। सुवर्ण और रजत पुष्पों के साथ साथ नवरत्न भी मिश्रित थे। चाँदी के पाँच सौ सिक्कों अर्थात् पाँच सौ रुपयों का अन्तिम अभिषेक में उपयोग किया गया।"

मूर्ति के चेहरे पर आए दिन कुछ दरार से नज़र आने लगे थे। मूर्ति के बायें और पिछले पार्श्वों में कुछ चट्टे से निकले थे। मैसूर राज्य की सरकार ने इन बातों की पूरी जाँच और छानबीन करके मूर्ति को ज्यों का ज्यों बनाये रखने के उपायों (अर्थात् दरार और चट्टों को मिटाने के साधनों) पर सलाह देने के लिये एक सलाहकारिणी समिति नियुक्त की है। इस समिति ने काफ़ी परिश्रम के साथ कई प्रयोग चला कर जाँच-संबंधी प्रशंसनीय कार्य किये हैं। इस समिति का कार्य अब भी जारी है।

गोम्मटेश्वर-विग्रह के सामने थोड़ी दूर पर दाहिने और बायें भागों में दो चामरधारी मूर्तियाँ खड़ी की गयी हैं। ये ऊँचाई में छः फुट के लगभग हैं। इनकी खुदाई सुन्दर है। अंगों में आभूषण खूब उत्कीर्ण किये गये हैं। दाहिने पार्श्व का पुरुष-विग्रह यक्ष का है; और बायें पार्श्व की मूर्ति यक्षी की है। गोम्मटेश्वर की मूर्ति के बायें हाथ की तरफ़ उसी के सामने पत्थर का बना हुआ एक गोल

(ऋ) चँवर-वाहक और मंडप

कुंड है जिसे ललित सरोवर (सुंदर कुण्ड) कहते हैं। यह नाम बामी पर के शिला-लेख से ज्ञात होता है। मूर्ति पर अभिषिक्त जल इस कुण्ड में जमा होता है। विग्रह के बायें पाद के पास शिला का एक मापदंड है जिस पर माप के कुछ चिह्न अंकित हैं। ये चिह्न ३'४" की लंबाई के सूचक हैं। किंतु पता नहीं कि यह काहे की माप है। गोम्मटेश्वर के विग्रह के पार्श्ववर्ती शिला-बामियों पर पुरानी कन्नड, मराठी और तमिळ भाषाओं के लेख हैं। इन लेखों से विदित होता है कि चामुंडराय ने यह विग्रह बनवाया ; और गंगराज ने विग्रह के चारों ओर के मंदिरों का निर्माण कराया।

गोम्मटेश्वर-मूर्ति के सम्मुखस्थित मंडप की छत के निचले भाग (या भुवनेश्वरी) में नौ सुन्दर-विग्रह उत्कीर्ण हैं। इनमें अष्ट दिक्पालकों की मूर्तियाँ हैं। बीच में इन्द्र की सुन्दर मूर्ति खड़ी की गयी है। गोम्मटेश्वर के अभिषेकार्थ इन्द्र-विग्रह के हाथ में जल-पूर्ण कुंभ रखा हुआ है। कड़े पत्थर पर की संगतराशी शिल्पी की कला-निपुणता बताती है। भुवनेश्वरी के बीचवाले विग्रह पर के शिला-लेख से विदित होता है कि बारहवीं सदी के प्रारंभ में मंत्री बलदेव ने यह मंडप बनवाया था।

विग्रह के दोनों पार्श्वों में चामुंडराय के शिला-लेखों के नीचे कन्नड, मराठी और तमिळ के कुछ लेख खुदे हैं। इन शिला-लेखों में बताया गया है कि गोम्मटेश्वर के चारों तरफ का परकोटा था

(५) सुत्तालय

९ छत पर का इन्द्र-विग्रह

१० सुत्तालय में स्थित आदिनाथ-मूर्ति

मुक्तालय विष्णुवर्धन होयसळ के सेनापति गंगराज ने बनवाया था। इसके अंदर बाहुबलि (या गोम्मटेश्वर), यक्षी कूष्मांडिनी और तीर्थंकरों की सुन्दर मूर्तियाँ रखी हैं। अधिकांश मूर्तियाँ होयसळकालीन शिल्पकला के उत्तम नमूने हैं। भक्तों ने इनमें से अनेकों के पाद-पीठों पर मनौती के शिला-लेख खुदवाये हैं। विग्रहों पर नाम-तख्ते लगाये गये हैं। चौबीस तीर्थंकरों के नाम यहाँ दिये जाते हैं—

१ आदिनाथ
२ अजितनाथ
३ शांभव
४ अभिनंदन
५ सुमतिनाथ
६ पद्मप्रभ
७ सुपार्श्वनाथ
८ चंद्रप्रभ
९ पुष्पदंत
१० शीतलनाथ
११ श्रेयांस
१२ वासुपूज्य
१३ विमलनाथ
१४ अनंतनाथ
१५ धर्मनाथ
१६ शांतिनाथ
१७ कुंथुनाथ
१८ अरनाथ
१९ मल्लिनाथ
२० मुनिसुव्रत
२१ नमिनाथ
२२ नेमिनाथ
२३ पार्श्वनाथ
२४ [illegible]

उपर्युक्त सभी तीर्थंकरों की मूर्तियाँ [illegible] उपलब्ध नहीं हैं।

III

चंद्रगिरि

कन्नड भाषा में छोटे पहाड़ को चिक्कबेट्ट कहते हैं। चंद्रगिरि छोटा पहाड़ है। इसलिये यह 'चिक्कबेट्ट' के नाम से प्रसिद्ध हुआ है। यह पहाड़ तलहटी के मैदान से १७५ फुट और समुद्रतल से ३,०५२ फुट ऊँचा है। संस्कृत भाषा के प्राचीन शिला-लेखों में इसको 'कटवप्र' कहा गया है। कन्नड के शिला-लेखों में इसका नाम कळवप्पु अथवा कळबप्पु मिलता है। इस पहाड़ का एक भाग तीर्थगिरि और ऋषिगिरि के नाम से प्रसिद्ध है। पहाड़ पर केवल एक देवालय को छोड़ अन्य सब देवालय प्राचीर-दीवार के अंदर बने हुए हैं। मंदिर के चारों ओर की दीवार को प्राकार कहते हैं। अधिकतर मंदिर शिल्प-कला की द्राविड़-शैली पर बनाये गये हैं। इनमें सबसे प्राचीन देवालय शायद आठवीं शताब्दी का मालूम होता है। प्राकार के अंदर कुल तेरह मंदिर हैं। सभी मंदिर क़रीब क़रीब एक ही ढाँचे पर बने हुए हैं। इस पुस्तिका में अन्यत्र दिये हुए नक्शे में इनके स्थान एवं विन्यास का निर्देश किया गया है।

उपर्युक्त प्राकार के बाहर पूर्व की तरफ़ एक गुफ़ा पड़ती है जिसे भद्रबाहु की गुफ़ा कहते हैं। इसके सामने का मंडप इधर का बना हुआ है। यह दंत-

११ भद्रबाहु की गुफ़ा

कथा प्रसिद्ध है कि श्रुतकेवलि भद्रबाहु
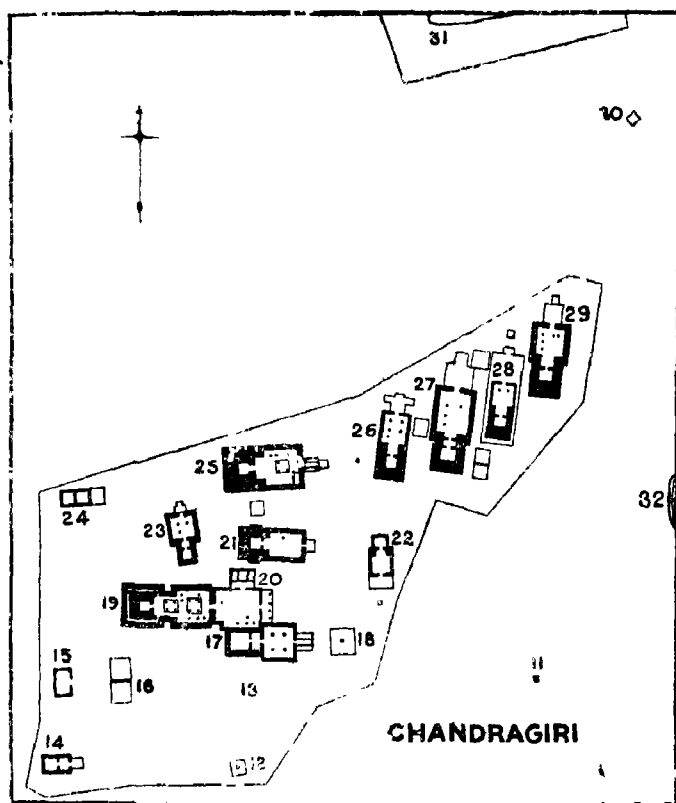
११ चन्द्रगिरि पहाड़ के मंदिरों का नक्शा

स्वामी ने उत्तर भारत से श्रवणबेळगोळ आ कर इस गुफ़ा में वास किया था। इसी गुफ़ा में उनका देहान्त हुआ था। गुफ़ा के अंदर शिला पर इनके पाद-चिह्न खुदे हुए हैं। ये पाद-चिह्न अब तक पूजे जाते हैं। यह भी कहा जाता है कि मौर्य सम्राट् चंद्रगुप्त तीर्थयात्रा करते हुए यहाँ पहुँचे थे और इस स्थान में उन्होंने दक्षिणाचार्य से दीक्षा-ग्रहण किया था। वे यहीं रह कर भद्रभाहु स्वामी के पादचिह्नों की पूजा आजीवन करते रहे और अन्त में यहीं प्राण-त्याग किया। श्रुतकेवलि भद्रबाहु स्वामी के अपने शिष्य मौर्य सम्राट् चंद्रगुप्त के साथ उत्तर से दक्षिण में प्रस्थान कर श्रवणबेळगोळ में आ कर बसने के बारे में जो दंतकथा प्रसिद्ध है वह संक्षेप में यों है—

अन्तिम श्रुतकेवलि भद्रबाहु ने उज्जैन में यह भविष्यवाणी की थी कि उत्तर भारत में अनावृष्टि के कारण बारह वर्ष तक भीषण अकाल पड़ेगा। इस पर अन्नाभाव के भय से बहुत से जैन भद्रबाहु के नेतृत्व में दक्षिण चले आए। सम्राट् चंद्रगुप्त ने अपना साम्राज्य छोड़ कर भद्रभाहु के साथ हो लिया। श्रवणबेळगोळ में पहुँचने पर भद्रबाहु ने इस बात का अनुभव किया कि अब मेरा अन्तिम दिन शीघ्र ही आनेवाला है। तब उन्होंने अपने साथियों को आगे अपनी यात्रा जारी रखने की आज्ञा दी; और आप अपने शिष्य चंद्रगुप्त के साथ यहीं ठहर गये। उन्होंने यहीं प्राण-त्याग किया। चंद्रगुप्त भी यहाँ कुछ वर्षों तक तपश्चर्या करते हुए

अपने गुरु के चरण-चिह्नों को पूजते रहे ; और अंत में सल्लेखन-क्रिया (आजीवन अनशन व्रत रखने की जैन-क्रिया) द्वारा अपने भौतिक शरीर को तज दिया

उपर्युक्त दंतकथा स्थानीय इतिहास से सप्रमाण सिद्ध होती है। अनेक ग्रंथकार अपने ग्रंथों में यह कहानी लिख गए हैं। क़रीब सातवीं शताब्दी तथा उसके बाद के शिला-लेखों से भी यह प्राचीन जनश्रुति पुष्टि पाती है। संस्कृत भाषा के बृहत्कथाकोश (९३१ ई०) एवं भद्रबाहुचरित (१५ वीं सदी) और कन्नड भाषा के मुनिवंशाभ्युदय (१६८० ई०) तथा देवचन्द्र-कृत 'राजावळि-कथे' (राजावळिकथा) साहित्यिक ग्रंथ हैं। इन सब में उपर्युक्त प्रसंग की भिन्न भिन्न प्रकार से व्याख्या की गयी है। भद्रबाहु की गुफ़ा के सामने दो और चरण-चिह्न अंकित पाये जाते हैं। इनके पीछे की बहुत बड़ी शिला पर एक गुरु और उनके शिष्य के साथ कुछ तीर्थंकरों की मूर्तियाँ उत्कीर्ण की गयी हैं। इनके नीचे के शिला-लेख में मल्लिषेणदेव की मृत्यु पर बनाये हुए चरम-श्लोक अंकित हैं।

परकोटे के दक्षिणी प्रवेश-द्वार पर एक बहुत ऊँचा स्तंभ स्थित है जिसके ऊपर ब्रह्मदेव की एक छोटी मूर्ति बिठायी गयी है।

१२ कूगे ब्रह्मदेव-स्तम्भ

इस स्तम्भ को यहाँ के लोग कूगे ब्रह्मदेव स्तंभ कहते हैं। ब्रह्मदेव का यह विग्रह पूर्वाभिमुखी है। आठों दिशाओं में खड़े किये गये आठ हाथियों

के विग्रह के अधार पर इस स्तम्भ का पादपीठ रखा हुआ था। परंतु इस समय अधिकतर विग्रह नहीं रहे; कुछ ही शेष हैं। गंगवंशीय राजा मारसिंह द्वितीय के स्मारक में इस स्तम्भ पर एक शिला-लेख खुदा है। इस राजा की मृत्यु ९७४ ई० में हुई थी; अतः इस स्तम्भ की स्थापना का समय इस ईस्वी से बहुत आगे का नहीं हो सकता।

१२ शिला-लेख

कूगे ब्रह्मदेव-स्तम्भ और पार्श्वनाथ स्तम्भ के बीच के स्थान को हाल में चारों तरफ़ से शिला-पटियाओं की कटबंदी से घेरा गया है। यहाँ की एक चट्टान पर कई प्राचीन शिला-लेख हैं। ये शिला-लेख ऐतिहासिक महत्ता रखते हैं: अधिकतर शिला-लेखों की लिपि पुरानी कन्नड की है; भाषा कन्नड अथवा संस्कृत है। उनमें से सल्लेखन-क्रिया द्वारा शरीरत्यक्त जैन साधुओं के बारे में कई मृत्यु-लेख हैं। कुछ अभिलेखों की भाषा और शैली सातवीं तथा आठवीं शताब्दियों की प्रयुक्त प्राचीन कन्नड–काव्य–भाषा एवं शैली के नमूने के तौर पर पेश की जा सकती हैं। इनमें से नं० १ और नं० ३१ वाले अभिलेख महत्त्वपूर्ण हैं। ऊपर कह चुके हैं कि श्रुतकेवलि भद्रबाहु ने जिस समय बारह साल तक के अकाल एवं सूखे की भविष्यवाणी की उस समय जैनियों का एक दल भद्रबाहु के नेतृत्व में उत्तर से दक्षिण भारत चला आया था। इस प्रसंग की व्याख्या उपर्युक्त नं० १ वाले अभि–

लेख में की गयी है। नं० ३१ वाला अभिलेख क़रीब ६५० ई० का है। उस पर इस आशय का एक लेख है: "भद्रबाहु और चन्द्रगुप्त दो महान् मुनि हुए जिनकी कृपा-दृष्टि से जैनमत उन्नत दशा को प्राप्त हुआ।" इसी तरह के और मृत्यु-लेख (चरम-पद्य एवं चरम-श्लोक) तथा अन्य अभिलेख शासन-बस्ती और चामुंडराय-बस्ती के सामने वाली शिला पर भी खुदे हुए हैं।

कूगे ब्रह्मदेव-स्तम्भ के पश्चिम की तरफ़ चौबीस तीर्थंकरों में से सोलहवें तीर्थंकर शांतिनाथ स्वामी का एक छोटा मंदिर है।

१४ शांतिनाथ बस्ती

इस मंदिर के गर्भगृह के सामने उससे लगी हुई सुखनासी है। मंदिर की देहरी पर द्वार-मंडप है। मंडप के स्तम्भ गंग-शासन के उत्तर काल के मालूम होते हैं। शांतिनाथ का खड़ा विग्रह क़रीब ग्यारह फुट ऊँचा है। यह मूर्ति मटिया पत्थर की बनी है। संभवतः यह मूर्ति होयसळ-काल की होगी अथवा उससे भी प्राचीन। किसी समय इस मंदिर की छत और दीवारें सुन्दर रंगीले चित्रों से अलंकृत थीं। इस समय कुछ चित्र खंडित दशा में हैं; अधिकांश नष्ट हो गये हैं या मिट गये हैं। बचे हुए नृत्यकार और तीर्थंकरों के खंडित रंगीन चित्र भी अनुसंधान-योग्य हैं।

शांतिनाथ बस्ती (मंदिर) के उत्तर में एक मंडप के पार्श्ववर्ती
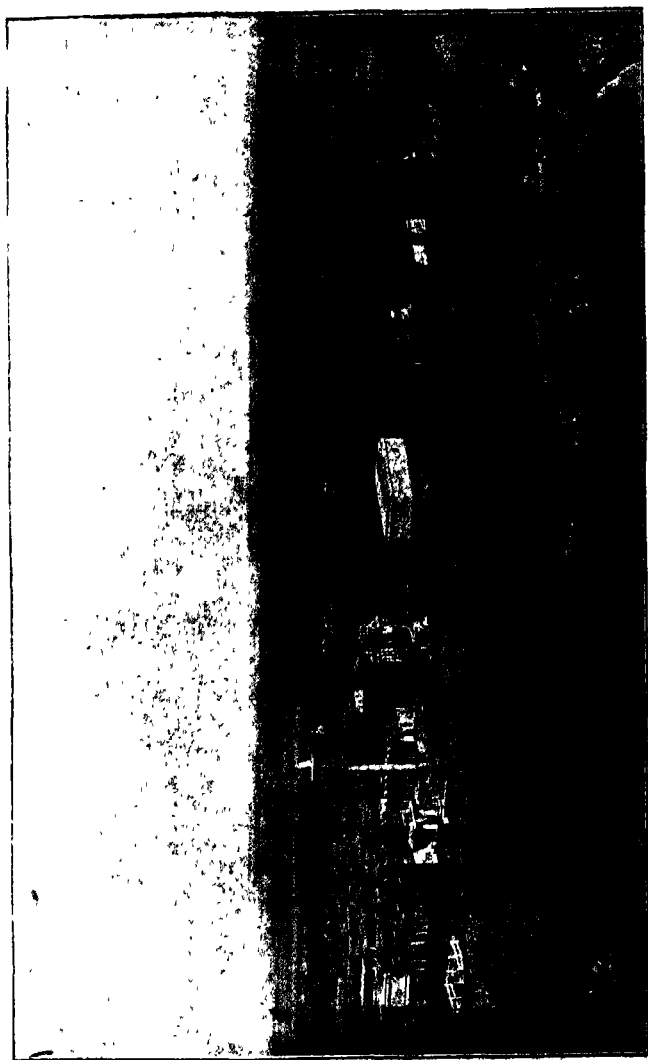
१२ चन्द्रगिरि पहाड़ के जैन मंदिर

१३ भरतेश्वर

मैदान में बाहुबलि या गोम्मटेश्वर के गुरु भाई भरतेश्वर का विग्रह खड़ा किया गया है। मटिया-पत्थर का बना हुआ यह अपूर्ण विग्रह नौ फुट ऊँचा है। सिर से जांघों तक विग्रह अखंड है। इसकी जांघें एक चट्टान से निकली हुई हैं और इस स्थान से विग्रह ऊपर को उठा हुआ है। इस विग्रह को पत्थर से मारने पर कर्णमधुर ध्वनि निकलती है। श्रुति-सुख पाने के इच्छुक यात्रियों ने पत्थर से विग्रह को मार मार कर कई जगह चिह्नित कर दिया है।

१५ भरतेश्वर

भरतेश्वर-मूर्ति के पूर्व की ओर दो मंडप, एक के बगल में एक, विद्यमान हैं। इनको महानवमी-मंडप कहते हैं। इन मंडपों के बीच के स्तम्भों पर खुदाई का बड़ा सुन्दर काम किया गया है। इनके सिरे शिखराकार के हैं। मंडपों के चारों खम्भे कड़े पत्थर को तराश कर बेलनाकार बनाये गये हैं। ११७६ ई० में निर्वाण को प्राप्त नयकीर्ति नामक जैन गुरु के स्मारक में स्थापित एक स्तम्भ पर चरम-श्लोक लिखा हुआ है। यह अभिलेख-युक्त स्तम्भ उनके शिष्य नागदेव मन्त्री के द्वारा स्थापित कराया गया।

१६ महानवमी मण्डप

इन मंडपों के पूर्व की तरफ़ पार्श्वनाथ बस्ती (मंदिर) है। यह मंदिर बहुत बड़ा है। इसके सामने एक मानस्तम्भ खड़ा किया गया है। मंदिर में गर्भगृह और उससे लगी हुई सुखनासी है जिसमें

१७ पार्श्वनाथ बस्ती

खड़े हो कर भक्त लोग गर्भगृह के अंदर की मूर्ति के दर्शन करते हैं। सुखनासी से लगा हुआ एक मंडप है। यही इस मंदिर का रंग-मंडप या नृत्य-मंडप है। इसे कन्नड भाषा में 'नवरंग' कहते हैं। मंदिर की देहरी पर द्वार-मंडप बना हुआ है। यह मंदिर उत्कृष्ट स्थापत्य-कला का सुन्दर नमूना है और देखने में रम्य है। बाहर की दीवारों में चौकोर खंभे खुदे हैं। दो दो खंभों के बीच में दीवार में छोटे छोटे कंगूरे भी खुदे हैं। मंदिर के द्वार बहुत ऊँचे हैं। नवरंग (रंग-मंडप) और द्वार-मंडप के भीतर पार्श्वों में जगत बने हुए हैं। नवरंग के गोलाकार स्तम्भ गंगकालीन कला-शैली पर उत्कीर्ण किये गये हैं। ये स्तम्भ नीचे घंटे की शकल में, उसके ऊपर गमले की शकल में और फिर उसके ऊपर चक्र की शकल में ढले हुए हैं। इस मंदिर का पार्श्वनाथ-विग्रह पन्द्रह फुट ऊँचा है और पहाड़ के अन्य मंदिरों की मूर्तियों से ऊँचा है।

पार्श्वनाथ बस्ती के सामने एक मानस्तम्भ खड़ा किया गया है जिसके ऊपर एक छोटा सा मंडप है। यह मंडप चारों ओर से खुला है। इसमें प्रत्येक दिशा में एक जैन मूर्ति खड़ी है। पर, ब्रह्मदेव-स्तम्भ के ऊपर ब्रह्मा की मूर्तियाँ बैठी होती हैं। यही इन दोनों में अंतर है। इस मानस्तम्भ के चारों तरफ़ एक एक जैन-विग्रह खुदा हुआ है। पादपीठ के दक्षिणी मुख पर पद्मावती की मूर्ति आकीर्ण है; पूर्व के मुख पर किसी यक्ष की खड़ी मूर्ति
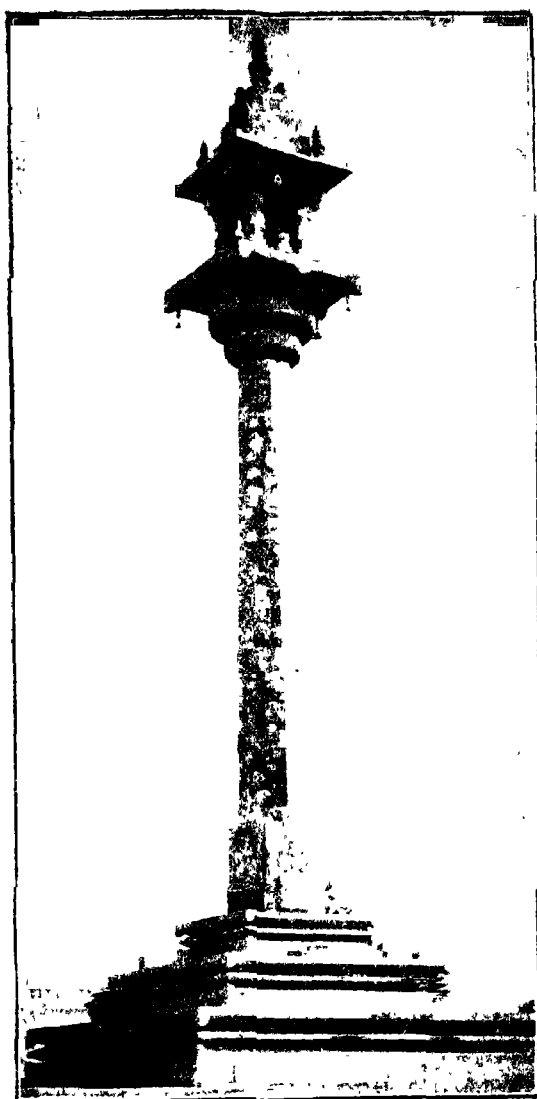
१८ मानस्तम्भ
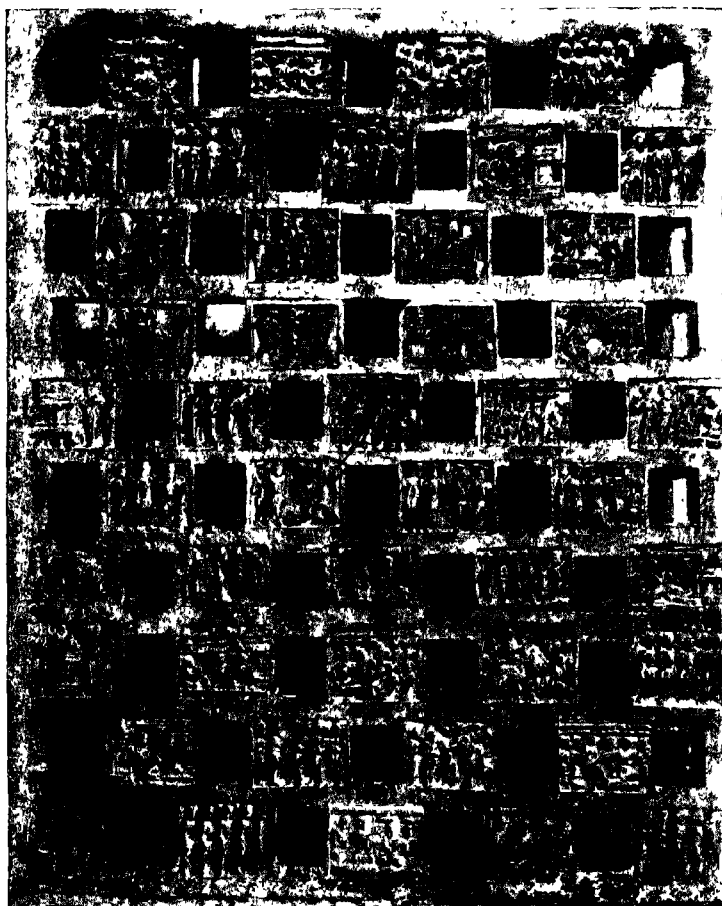
१४ मानस्तम्भ

५६ चन्द्रगुप्त बस्ती की एक और शिला-जालन्ध्री

है; उत्तरी मुख पर यक्षी कूष्मांडिनी बैठी हुई है और पश्चिमी मुख पर तेज़ दौड़ते हुए एक घुड़सवार का विग्रह खुदा है। यह ब्रह्मा का चिह्न माना जाता है। मैसूर नरेश श्री चिक्कदेवराज ओडेयर के शासन-काल (१६७२ ई० से १७०४ ई० तक) में पुट्टय्या नामक किसी जैन व्यापारी ने यह मानस्तम्भ स्थापित कराया। कहते हैं कि इन्हीं पुट्टय्या ने मंदिर की प्राचीर-दीवार भी बनवायी।

१९ कत्तले बस्ती

चन्द्रगिरि पहाड़ पर कत्तले बस्ती सबसे विशाल और बड़ा मंदिर है। यही एक मंदिर है जिसके गर्भगृह के चारों ओर परिक्रमा बनी हुई है। गर्भगृह और उसके चारों ओर बनी हुई परिक्रमा के अतिरिक्त पुराने ज़माने में खुली मुखनासी एवं नवरंग बने हुए थे। इसके आगे, पीछे चल कर, एक मुख-मंडप और ओसारा (बरामदा) बनवाये गये। नवरंग के तरह तरह के खंभे कड़ी शिला के बने हैं। छत के निचले भाग के मध्य की चौकी पर लताओं से वर्तुलाकार में परिवेष्टित कमल-पुष्प खिला हुआ सा उत्कीर्ण किया गया है। छत की अन्य चौकियाँ चौकोर हैं और चित्रों से अलंकृत हैं। इस मंदिर के सामनेवाला मुख-मंडप मंदिर के अंदर प्रकाश को आने नहीं देता। अतः मंदिर के अंदर सदा अंधकार रहता है। इसलिए इस मंदिर का नाम कत्तले बस्ती पड़ा

(कत्तले का अर्थ कन्नड में अंधकार होता है)। मंदिर के बाहरी ओसारे में पद्मावती का एक शिला-विग्रह विद्यमान है। संभवतः इसीलिए इस मंदिर को पद्मावती बस्ती (पद्मावती-मंदिर) भी कहते हैं। गर्भगृह में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी की सुंदर शिला-मूर्ति विराजमान है। विष्णुवर्धन के सेनापति गंगराज ने यह मंदिर बनवाया। यह मंदिर जीर्ण अवस्था को पहुँच गया था। मैसूर सरकार ने इधर कुछ समय पहले मंदिर की मरम्मत करवाई है।

कत्तले बस्ती के मुख-मंडप के उत्तर में उसीसे लगा हुआ एक छोटा सा मंदिर है। इस पहाड़ पर यह सबसे छोटा मंदिर है। यह दक्षिणाभिमुखी है। इसमें लगातार तीन गर्भगृह हैं।

२० चन्द्रगुप्त बस्ती

बीच के गर्भगृह को छोड़ कर अन्य गर्भगृहों पर छोटे छोटे कलश बने हुए हैं। इनकी कारीगरी चोळ-शैली की है। इस मंदिर के सामने पीछे चल कर एक नया अलंकार-पूर्ण सुन्दर द्वार बनवाया गया; इसके दोनों पार्श्वों में शिला के जालंध्र भी रचे गये। शिला की पाँच चित्र-पट्टिकाओं को जोड़कर द्वारकी चौखट बनायी गयी है। चित्र-पट्टिका की खुदाई उत्कृष्ट है। जालंध्रों के छेद चौकोर हैं और उनकी चित्रकारी बड़ी बारीक और कलापूर्ण है। इन चित्रों द्वारा श्रुतकेवलि भद्रबाहु और मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त

१५ चन्द्रगुप्त बस्ती की शिला-जालन्ध्री

१७ धरणेन्द्र यक्ष

के जीवन संबंधी प्रसंगों की व्याख्या जैन पुराणों के अनुसार की गयी है। द्वार के पूर्ववर्ती जालंध्र की हर दूसरी पंक्ति की शिला-पटियाँ उलटी सीधी हो गयी हैं। किसी समय चित्रों के ठीक जगह पर न रखने के कारण ही ऐसा हुआ होगा। परंतु इस जालंध्र की सब से ऊपर वाली शिला-पटिया को सबसे नीचे और सबसे नीचे वाली को सबसे ऊपर लगा देने पर पश्चिमवर्ती जालंध्र से इसका मेल ठीक बैठ जायगा। मंदिर के मध्य-गृह में पार्श्वनाथ स्वामी की मूर्ति विराजमान है। दाहिने गृह में पद्मावती देवी की शिला-मूर्ति स्थापित है; और बायें गृह में यक्षी कूष्मांडिनी की शिला-मूर्ति है। इन तीनों गृहों की मूर्तियाँ बैठी हुई मुद्रा में हैं। बरामदे के दाहिने किनारे पर यक्ष धरणेन्द्र की मूर्ति है और बायें किनारे पर यक्ष सर्वाह्ण की मूर्ति है। ये दोनों मूर्तियाँ खड़ी हुई मुद्रा में हैं। इस द्वार से निकलते ही हम सभा-मंडप में पहुँचते हैं, जिसके दरवाज़े से हो कर कत्तले बस्ती के अंदर जा सकते हैं। बाहरी दीवारों अर्धगोलाकार उभरे हुए खंभे खुदे हुए हैं। बीच बीच में चित्र-पट्टिकाएँ खुदी हुई हैं। इन पर एक दूसरे की ओर मुँह किये हुए यालियें (सिंहों के समान एक प्रकार के हिंस्र पशुओं) के चित्र हैं। चंद्रगुप्त बस्ती के मध्य-गृह के सामने वाले सभा-मंडप में एक लेख-युक्त पादपीठ पर क्षेत्रपाल की मूर्ति खड़ी की गयी है। कहते हैं कि मौर्य सम्राट् चंद्रगुप्त ने यह मंदिर बनवाया। एक जालंध्र पर 'दासोज' नाम खुदा है।

इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि द्वार और जालंध्र के बनानेवाले कारीगर का यही नाम है। बहुत संभव है कि बेलूर के चेन्नबसवेश्वर मंदिर के द्वार और दीवार पर स्थित सुन्दर मदनिका-मूर्तियाँ बनानेवाला शिल्पी भी यही हो। अतः उपर्युक्त द्वार और जालंध्र बारहवीं शताब्दी के मध्य-भाग के बने होंगे। देवालय के कुछ अन्य भाग तो पहाड़ के और सब मंदिरों से अधिक प्राचीन हैं; ये संभवतः नवम या दशम शताब्दी तक के पुराने होंगे।

शासन बस्ती के द्वार पर जाते ही प्रेक्षकों का ध्यान सामने ही खुदे हुए एक शिला-लेख की तरफ़ आकृष्ट होता है। इसलिए यह मंदिर शासन-बस्ती कहलाता है। कन्नड में शासन का अर्थ शिला-लेख होता है। पाये के ऊपर की दीवारें ईंट और गारे की बनी हुई हैं। मंदिर में एक गर्भगृह है, उससे लगी हुई सुखनासी है (जिसे कन्नड में अंतराळ भी कहते हैं) और उसके सामने नवरंग बना है। गर्भगृह में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ स्वामी की मूर्ति विराजमान है जिसके दोनों पार्श्वों में चामरधारी अंगरक्षकों के विग्रह खड़े किये गये हैं। नवरंग में इन जिन के यक्ष गोमुख और यक्षी चक्रेश्वरी के शिला-विग्रह रखे हैं। बाहरी दीवारों में अर्ध-गोलाकार उभरे हुए खंभे खुदे हुए हैं। कहीं कहीं आले भी बने हैं जिनमें जिनों की मूर्तियाँ स्थापित हैं। इन चित्रों के कारण दीवारें बहुत रम्य हो गयी हैं। आदिनाथ-विग्रह के पादपीठ पर खुदे हुए

२१ शासन बस्ती

शिला-लेख में लिखा है कि सेनापति गंगराज ने यह मंदिर बनवाया और इसका इन्दिराकुळ-गृह नाम रखा। चालुक्य-नरेश त्रिभुवनमल्ल पेर्माडी और उसके बारह सामन्तों के विरुद्ध कण्णेगाल में किये हुए युद्ध में प्राप्त विजय के उपलक्ष्य में राजा विष्णुवर्धन द्वारा १११८ ई० में प्राप्त परम ग्राम को सेनापति ने इस मंदिर के लिए जागीर में दिया। मंदिर का निर्माण-काल संभवतः १११७ ई० होगा। ओलती के नीचे गंडभेरुंड पक्षी (दो सिरवाला एक पौराणिक बाज) का एक विग्रह है।

१२ मज्जिगण्ण बस्ती

मज्जिगण्ण-बस्ती एक छोटा मंदिर है जिसमें चौदहवें तीर्थंकर अनंतनाथ की शिला-मूर्ति स्थापित की गई है। बाहरी दीवारों पर एक कतार में लगी हुई शिला-पट्टिकाओं पर फूल कढ़े हैं। नवरंग के स्तम्भ खराद कर गोलाकार बनाये गये हैं। मंदिर के बनानेवाले के नामसे इसका नाम मज्जिगण्ण बस्ती पड़ा होगा। कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिल रहा है जिससे मंदिर के निर्माण-काल का निश्चय हो सके। कदाचित् गंगशासन के उत्तर-काल अथवा होयसळ-शासन-काल के पूर्व-भाग में यह मंदिर बना हो।

१३ चंद्रप्रभ बस्ती

चंद्रप्रभ बस्ती शासन-बस्ती के पश्चिम में है। इसके गर्भगृह में आठवें तीर्थंकर चंद्रप्रभस्वामी की शिला-मूर्ति बिठाई हुई है। मंदिर के गर्भगृह से सुखनासी लगी हुई है। उसके सामने नवरंग है

और देहरी पर द्वारमंडप बना हुआ है। सुखनासी में श्याम और ज्वालामालिनी की शिला-मूर्तियाँ रखी हैं जो इन जिन के यक्ष-यक्षी हैं। ज्वालामालिनी-मूर्ति के पादपीठ पर एक सिंह (बैल नहीं—जो कि इस विग्रह का प्रायः चिह्न होता है) खुदा हुआ है, जिसकी पीठ पर दो सवार एक दूसरे के पीछे बैठे हैं। मंदिर में किसी विग्रह के पीछे प्रभामंडल नहीं है (प्रभामंडल गोलाकार शिला या काठ होता है जो देवी अथवा देवता की पीठ के पीछे उससे सटे हुए या ज़रा हटे हुए लगा रहता है और जो उसके तेजोमंडल का प्रतीक माना जाता है)। संभव है कि ये विग्रह होय-सळकाल से पूर्व के हों। नवरंग की बाहरी दीवार के बिलकुल पास की बिछी हुई शिला पर एक लेख खुदा हुआ है। इससे ज्ञात होता है कि शिवमार ने एक मंदिर बनवाया था। अनुसंधान से यह सिद्ध होता है कि ये गंगवंशीय राजा शिवमार द्वितीय हैं। यदि उपर्युक्त शिला-लेख में उल्लिखित मंदिर चंद्रप्रभ बस्ती ही हो तो यह मंदिर इस पहाड़ के सब मंदिरों से अधिक प्राचीन काल का सिद्ध होता है और उसका निर्माण-काल क़रीब ८०० ई० ठहरता है।

पुराने ज़माने में बनाये गये पाये पर ईंट-गारे का बना हुआ यह मंदिर नींव डालने के कई वर्ष बाद का बना मालूम होता है।

चामुंडराय बस्ती के पश्चिम में उत्तर-पश्चिम के कोने में

१८ सुपार्श्वनाथ
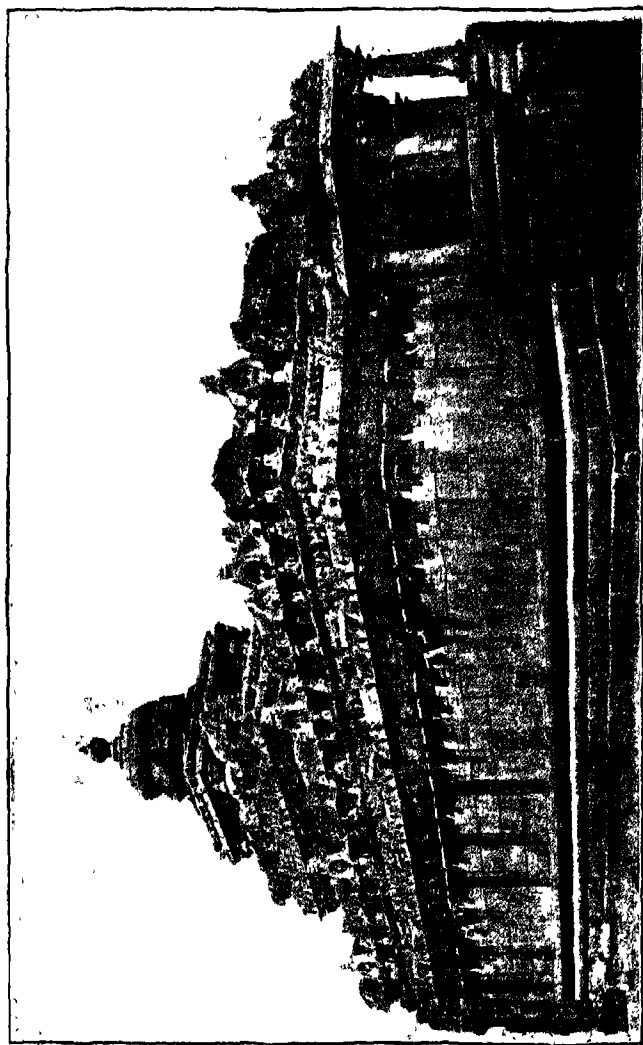
१९ चामुण्डराय बस्ती

२४ सुपार्श्वनाथ बस्ती

बनी हुई सुपार्श्वनाथ बस्ती आकार-प्रकार में शांतिनाथ बस्ती के जैसे ही है। सामान्यतः सुपार्श्वनाथ-विग्रह के पीछे एक सर्प-छत्र होता है, जो विग्रह के सिर पर उठा हुआ रहता है। तीर्थंकर-विग्रहों में इसके अतिरिक्त केवल पार्श्वनाथ-विग्रह के सिर पर सर्प-छत्र होता है। ऐसे सर्पों के कहीं तीन, कहीं पांच और कहीं सात फन होते हैं। प्रस्तुत मंदिर में विग्रह बिठाया हुआ है और सिर पर सात फनवाला अहि-छत्र लगा हुआ है। दोनों पार्श्वों में चँवरधारी अंगरक्षक हैं। इस मंदिर के निर्माण-काल या निर्माणकर्त्ता का कोई विश्वसनीय प्रमाण अब तक उपलब्ध नहीं है।

चामुंडराय बस्ती पहाड़ के सबसे बड़े मंदिरों में से है। यह मंदिर अत्यंत रमणीय एवं सर्वांगसुन्दर है।

२५ चामुंडराय बस्ती

इसके गर्भगृह पर अटारी है जिस पर कलश बना हुआ है। इससे लगी खुली सुखनासी है। इसके आगे नवरंग बना है और मंदिर की देहरी पर द्वार-मंडप हैं। इसके दोनों पार्श्वों में ओसारे बने हैं। गर्भगृह पर अटारी है जिसपर कलश बना है। गर्भगृह में बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ की शिला-मूर्ति है। सुखनासी में नेमिनाथ के यक्ष-यक्षी सर्वाह्ण और कूष्मांडिनी देवी की सुंदर शिला-मूर्तियाँ विराजमान हैं। बाहरी पाये पर तीन कारनीसें

पत्नी श्रीमती लक्ष्मी देवी ने यह मंदिर बनवाया। इसका निर्माण-काल शायद ११९८ ई० हो।

सवतिगंधवारण बस्ती का संक्षिप्त नाम (गंधवारण बस्ती) अधिक प्रचलित है। यह एरडुकट्टे बस्ती की दाहिनी तरफ़ पड़ती है। यह मंदिर काफ़ी बड़ा है।

२७ सवतिगंधवारण बस्ती

इसमें एक गर्भगृह, उससे लगी हुई सुखनासी और उसके सामने नवरंग हैं। 'सवतिगंधवारण' होय्सळ-नरेश विष्णुवर्धन की पटरानी शांतलादेवी की एक अनोखी उपाधि है। 'सवति-गंधवारण' शब्द का अर्थ है 'जो अपनी सौतों के लिये मस्त हाथी के समान है'। इसी रानी ने यह मंदिर बनवाया। इसलिए मंदिर का नाम 'सवतिगंधवारण बस्ती' हुआ। सोलहवें तीर्थंकर शांतिनाथ की शिला-मूर्ति गर्भगृह में स्थापित है जिसके पीछे लगा हुआ कलामय प्रभा-मंडल मूर्ति की शोभा बढ़ा रहा है। इसके दोनों पार्श्वों में चँवर-धारी अंगरक्षकों की मूर्तियाँ हैं। सुख-नासी की देवढ़ी पर इन जिन के यक्ष-यक्षी किंपुरुष और महामानसी की मूर्तियाँ रखी हैं। बाहरी दीवारों में खंभे खुदे हुए हैं। गर्भगृह के ऊपर ईंटों का बना हुआ एक सुंदर ऊँचा कलश (गोपुर) है। इसकी बनावट में गंगकालीन कलशों का अनुकरण किया गया है। होय्सळ-काल में बने हुए इस प्रकार के शिखरों का यह उत्कृष्ट नमूना है। नवरंग में अष्टकोण और षोडशकोण खंभे हैं जिन पर ऊपर से नीचे तक आधी नलियाँ सी काटी गयी हैं। द्वार के

पासवाले और विग्रह के पादपीठ पर के शिला-लेखों से विदित होता है कि रानी शांतलादेवी ने यह मंदिर ११२३ ई० में बनवाया।

आगे मंदिर के सामने एक रथ (रथाकार भवन) स्थातपि है। कन्नड में रथ को तेरु कहते हैं। इसलिये यह मंदिर तेरिन बस्ती (रथ-मंदिर) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके गर्भगृह के अंदर एक सुंदर बाहुबली या गोम्मटेश्वर का विग्रह विराजमान है। इसलिए इस मंदिर को बाहुबली बस्ती भी कहते हैं। 'मंदर' नाम से प्रसिद्ध इस रथ (रथाकार भवन) के चारों मुखों पर जैन-मूर्तियाँ उत्कीर्ण की गयी हैं। उसपर खुदे हुए शासन में लिखा है कि विष्णुवर्धन नरेश के राजवणिक् पोय्सळ सेट्टि और नेमिसेट्टि की माताओं ने (जिनके नाम माचिकब्बे और शांतिकब्बे हैं) मंदिर और मंदर अर्थात् रथ बनवाये।

२८ तेरिन बस्ती

शांतीश्वर बस्ती अथवा शांतिनाथ बस्ती ईंटों का बना हुआ होय्सळकाल का मंदिर है। इसके नवरंग में वर्तुलाकार खंभे हैं। मंदिर एक ऊँचे चबूतरे पर बना है। उसके ऊपर ईंट-गारे का एक सुंदर कलश खड़ा किया गया है। यह मंदिर कब बना और किसने बनवाया, इस बात का अब तक पता नहीं लगा है।

२९ शांतीश्वर बस्ती

घेरे के बाहर उसके उत्तरी द्वार की उत्तर दिशा में एक मंदिर है। इसके आसपास कोई दूसरा मंदिर नहीं है। यह मंदिर

३० इरुवे ब्रह्मदेव मंदिर

इरुवे ब्रह्मदेव बस्ती के नाम से प्रसिद्ध है। कन्नड में चींटी को इरुवे कहते हैं। मंदिर एक गर्भगृह मात्र है जिसमें स्थित एक शिला को काट कर ब्रह्मदेव की एक छोटी मूर्ति बनायी गयी है। द्वार पर लगे हुए शिला-लेख में इस मंदिर का निर्माण-काल क़रीब ९५० ई० सूचित किया गया है।

३१ कंचिन दोणे

कंचिन दोणे (काँसा-कुण्ड) उपर्युक्त मंदिर के उत्तर-पश्चिम में पड़ता है। पता नहीं कि इस जलाशय का यह अजीब नाम कैसे चल निकला। इस स्थान पर उपलब्ध शासनों में से एक से पता लगता है कि मानभ ने इसे अनुमानतः ११९४ ई० में बनवाया।

३२ लक्कि दोणे

इसी प्रकार का एक और कुंड घेरे के बाहर पूर्व में विद्यमान है। यहाँ के लोग इसे लक्कि दोणे के नाम से पुकारते हैं। नाम से अनुमान कर सकते हैं कि इसे बनवानेवाली लक्कि नाम की कोई स्त्री रही होगी। इस कुंड के पश्चिमवर्ती चट्टान पर कई शिला-लेख खुदे हुए हैं। ये नवम या दशम शताब्दी के होंगे।

चन्द्रगिरि पहाड़ के उत्तरी भाग के उतार पर से जिननाथ-पुर का संपूर्ण दृश्य दीखता है। साथ ही वहाँ के मटिया-पत्थर का बना हुआ शांतिनाथ देवालय भी दृष्टिगोचर होता है।

IV

श्रवणबेळगोळ ग्राम

प्रारंभ में कह चुके हैं कि श्रवणबेळगोळ ग्राम इंद्रगिरि और चन्द्रगिरि पहाड़ की सुन्दर घाटी में बसा हुआ है। यह जगह पीतल और ताँबे के बर्तनों के लिये अत्यंत प्रसिद्ध है; इस गाँव में ठठेरों के हथौड़ों की ठन ठन आवाज़ दिन भर सुनाई देती है।

भंडारी बस्ती गाँव भर में सब से बड़ा मंदिर है। मंदिर में एक गर्भगृह, उससे लगी हुई एक सुखनासी और नवरंग, उसके सामने देहरी पर द्वारमंडप और उसके सम्मुख एक मुखमंडप है। चारों ओर प्राचीर-दीवार है। गर्भगृह में एक लंबी चित्रमय वेदी पर चौबीस तीर्थंकरों की खड़ी मूर्तियाँ विराजमान हैं।

३२ भंडारि बस्ती

मंदिर में चौबीसों तीर्थंकरों की मूर्तियों के स्थापित होने के कारण इसे चतुर्विंशति-तीर्थंकर-बस्ती भी कहते हैं। गर्भगृह के तीन द्वार हैं। मध्य-द्वार बारहवें जिन वासुपूज्य के विग्रह के ठीक सामने पड़ता है। यह द्वार बहुत सुंदर खुदा हुआ है, इसके दाहिने और बायें भागों में खूबसूरत जालंध्र लगे हैं जो अच्छे ढंग से उत्कीर्ण हैं। सुखनासी के बायें पार्श्व में पद्मावती और ब्रह्मा की शिला-प्रतिमाएँ रखी हैं। नवरंग की तरफ़ के दरवाज़े

के सरदल पर संगतराशी का खूब बढ़िया काम किया गया है। सरदल पर द्वादश भुजाओं वाले इन्द्र की प्रस्थर-मूर्ति रखी है। मूर्ति के पीछे प्रभामंडल बना है। भिन्न भिन्न वाद्यों को हाथ में ले कर बजाते हुए संगीतज्ञों के मध्य में इन्द्रजी महाराज नाचते हुए बताये गये हैं। पर इन सब पर अब धुआँ लगा हुआ है। मंदिर के बारे में ध्यान देने की एक बात यह है कि इसके फ़रश पर कड़ी शिला की बहुत लंबी पटियाँ बिछी हुई हैं। सचमुच यह जानने योग्य है कि इतने बड़े शिला-खंड इस स्थान तक कैसे लाये गये और इन जगहों में किस तरह लगाये गये। मंदिर के प्रधान भवन के चारों ओर ओसारा है। मंदिर के सामनेवाला सुंदर मानस्तम्भ एक बहुत बड़ी अखंड शिला को काटकर बनाया गया है। यह मंदिर भंडारी बस्ती के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ के लोग साधारणतया इसे इसी नामसे पुकारते हैं; क्योंकि होयसळ-नरेश नरसिंह प्रथम (११४१ ई० से ११७३ तक) के कोषाध्यक्ष या 'भंडारी' हुल्ळ नामांकित प्रसिद्ध पुरुष के द्वारा यह मंदिर बनवाया गया। ११५९ ई० में मंदिर का निर्माण हुआ। राजा नरसिंह ने इसका नाम रखा 'भव्य-चूडामणि' और उसकी पूजा आदि व्यवस्था के लिए सवणेरु नाम का गाँव दान में दिया।

श्रवणबेळगोळ में अक्कन बस्ती होयसळ-शिल्प-शैली पर बना हुआ एक मात्र मंदिर है। इसमें एक गर्भगृह है जिससे

२० भंडारी बस्ती के तोरण-द्वार की उपरि-शिला पर नृत्य-मुद्रा में इन्द्र की मूर्ति

२१ अक्कन बस्ती : शिखर का सम्मुख–दृश्य

१५ अक्कन बस्ती
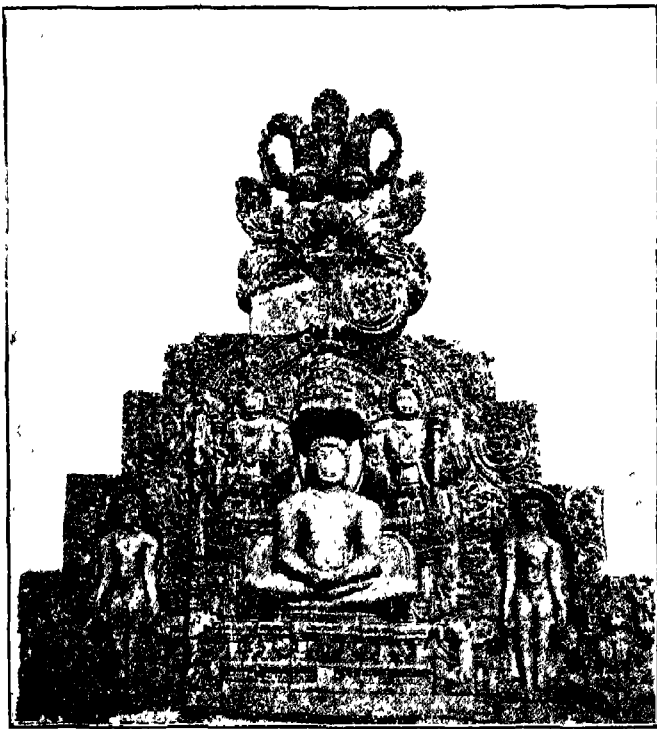
सुखनासी लगी है। सुखनासी से हम नवरंग में पहुँचते हैं जिसके द्वार पर द्वारमंडप बना हुआ है। गर्भगृह के अंदर पार्श्वनाथ स्वामी का शिला-विग्रह प्रतिष्ठित है जिसके सिर पर सात फणोंवाला अहि-छत्र विराजमान है। इन जिन के यक्ष-यक्षी, धरणेन्द्र और पद्मावती की दिव्य मूर्तियाँ सुखनासी में बिठाई हुई हैं। सुखनासी के प्रवेश-द्वार के दोनों पार्श्वों में जालंध्र बने हुए हैं। इनसे द्वार की रक्षा होती है और मज़बूती भी बढ़ती है। नवरंग में काले पत्थर को तराश कर बनाये हुए भव्य अलंकृत स्तम्भ हैं। नवरंग की छत में भी खुदाई का बहुत अच्छा काम किया गया है। छत की संगतराशी देखते ही बनती है। बाहरी दीवारों में अर्धगोलाकार उभरे हुए छोटे छोटे खंभे खुदे हैं जो उनकी शोभा बढ़ाते हैं। खंभों के बीच बीच में कहीं कहीं दीवारों में कंगूरे भी खुदे हुए हैं। गोपुर के सामने चबूतरा है। इस के सम्मुख एक सुंदर नक्क़ाशेदार चित्रपट्टिका खुदी हुई है जिस पर सर्पिल आकार के चित्र उत्कीर्ण हैं। चित्रपट्टिका पर एक सिंह का मस्तक खुदा हुआ है। चित्रपट्टिका के मध्यभाग में एक जैन-विग्रह बिठाया हुआ है जिसके सिर पर तीन छत्र तने हुए हैं। विग्रह बीचवाले छत्र के नीचे है। इसके प्रत्येक पार्श्व में चँवरधारी अंगरक्षक, एक

खड़ा जिन-विग्रह, एक यक्ष-विग्रह, और एक यक्षी की मूर्तियाँ विराजमान हैं। विग्रह के पादपीठ पर दोनों तरफ़ हाथी खुदे हुए हैं। चबूतरे के दोनों पार्श्वों में सरस्वती की मूर्तियाँ विद्यमान हैं। दक्षिण की दीवार सीधी नहीं है। इसलिए कई जगहों पर शिला की टेकें लगाकर दीवार को गिरने से बचाया गया है। होयसळ-नरेश बल्लाळ द्वितीय के एक ब्राह्मण-सचिव थे जिनका नाम चंद्रमौळि था। उनकी जैन-पत्नी आचियक्क देवी ने यह मंदिर ११८१ ई० में बनवाया। बल्लाळ द्वितीय ने मंदिर की पूजा आदि व्यय की व्यवस्था के लिए एक गाँव दान में दिया। इसलिए इस मंदिर का नाम आचियक्कन बस्ती अथवा संक्षेप में अक्कन बस्ती प्रसिद्ध हुआ।

प्राकार के पश्चिमी भाग में सिद्धांत बस्ती नाम का एक मंदिर है। किसी समय इस मंदिर की एक काली कोठरी में जैन सिद्धांत संबंधी सभी ग्रंथ पाये गये। इसीलिए मंदिर का यह नाम पड़ा। किसी तीर्थ-यात्री ने १७०० ई० के लगभग चतुर्विंशति तीर्थंकर-समूह की एक शिला-मूर्ति को इस मंदिर में स्थापित कर अपना भक्ति-भाव प्रकट किया।

१५ दानशाले बस्ती

अक्कन बस्ती के द्वार के पास ही दानशाले बस्ती है जिसमें पंचपरमेष्ठियों के शिला-विग्रह स्थापित हैं। जिन, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु—इनको पंच-परमेष्ठि कहते हैं।

अक्कन बस्ती के पास एक ही जैनेतर देवालय है जिसमें केवल एक गर्भगृह है। इसमें चतुर्भुजा काली देवी की शिला-मूर्ति बिठाई हुई है।

२६ काली मन्दिर

यह ध्यान देने की बात है कि इस देवी के भोग के लिए स्थानीय जैन मठ से चावल आता है।

नगर जिनालय एक बिलकुल छोटा मंदिर है। मंदिर में एक गर्भगृह, सुखनासी और नवरंग हैं। गर्भगृह में आदिनाथ का शिला-विग्रह विराजमान है। नवरंग के एक आले में ब्रह्मदेव की मूर्ति रखी है। इसके बायें हाथ में एक फल रखा हुआ है; दाहिने हाथ में चाबुक जैसी कोई वस्तु पकड़ायी गयी है। होय्सळ-नरेश बल्लाळ तृतीय (११७३ ई० से १२२० तक) के पट्टणस्वामी (नगरनायक) तथा नयकीर्ति-सिद्धांत-चक्रवर्ती के श्रावक-शिष्य नागदेव सचिव ने यह मंदिर ११९५ ई० में बनवाया। नगर या वणिक्वृन्द ने मंदिर के निर्वाह की व्यवस्था कर रखी थी। शिला-लेखों में नगर शब्द वणिक् के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इसलिए इस मंदिर का नाम नगर-जिनालय पड़ा।

२७ नगर जिनालय

मंगाई बस्ती शांतिनाथ स्वामी का एक मंदिर है जिसमें एक गर्भगृह, सुखनासी और नवरंग हैं। नवरंग के एक आले में वर्धमान की एक शिलोत्कीर्ण मूर्ति रखी है। चारुकीर्ति-पंडिताचार्य

२८ मंगाई बस्ती

की शिष्या, राजमंदिर की नर्तकी-चूड़ामणि और बेळगोळ की रहनेवाली मंगाई देवी ने यह मंदिर १३२५ ई० में बनवाया। मंदिर के द्वार पर दो सुंदर पत्थर के हाथी रखे हुए हैं।

३९ जैन मठ

जैन मठ जैनगुरु का निवास-स्थान है। यह मठ बहुत ही भव्य है। इसके बीच में खुला हुआ प्रांगण है। हाल में मठ पर खुली अटारी बनवायी गयी। द्वारमंडप (सामनेवाले मंडप) के स्तम्भ बड़ी कुशलता से तराशे हैं और उन पर कई सुंदर चित्र उत्कीर्ण हैं। मठ में तीन गर्भगृह हैं। इनमें रोज़ पूजे जानेवाले धातु और संगमरमर के कई विग्रह स्थापित किये गये हैं। बीच के और दाहिने भाग के गर्भगृहों की प्रधान मूर्तियाँ चंद्रनाथ और नेमिनाथ की हैं। बायें पार्श्व के गर्भगृह में दो धातु-मूर्तियाँ एक के ऊपर एक बिठायी हुई हैं; ऊपर की सरस्वती देवी है और नीचे की ज्वालामालिनी। दाहिनी तरफ़ के गर्भगृह में एक देव-मंडप है जिस पर कला का बहुत बारीक काम किया गया है। इस मंडप में नेमिनाथ की मूर्ति विराजमान है। कई मूर्तियाँ आजकल की हैं; इनमें से अधिकतर मूर्तियाँ मद्रासी भक्तों द्वारा भेंट की हुई हैं। मठ के विग्रहों में से नव-देवता-बिंब अथवा नौ देवताओंवाला विग्रह खास-कर देखने योग्य है। इस विग्रह में पंच परमेष्ठियों के अतिरिक्त जैन-धर्म को सूचित करनेवाला एक वृक्ष है।

२२ मगायि बस्ती का हाथी
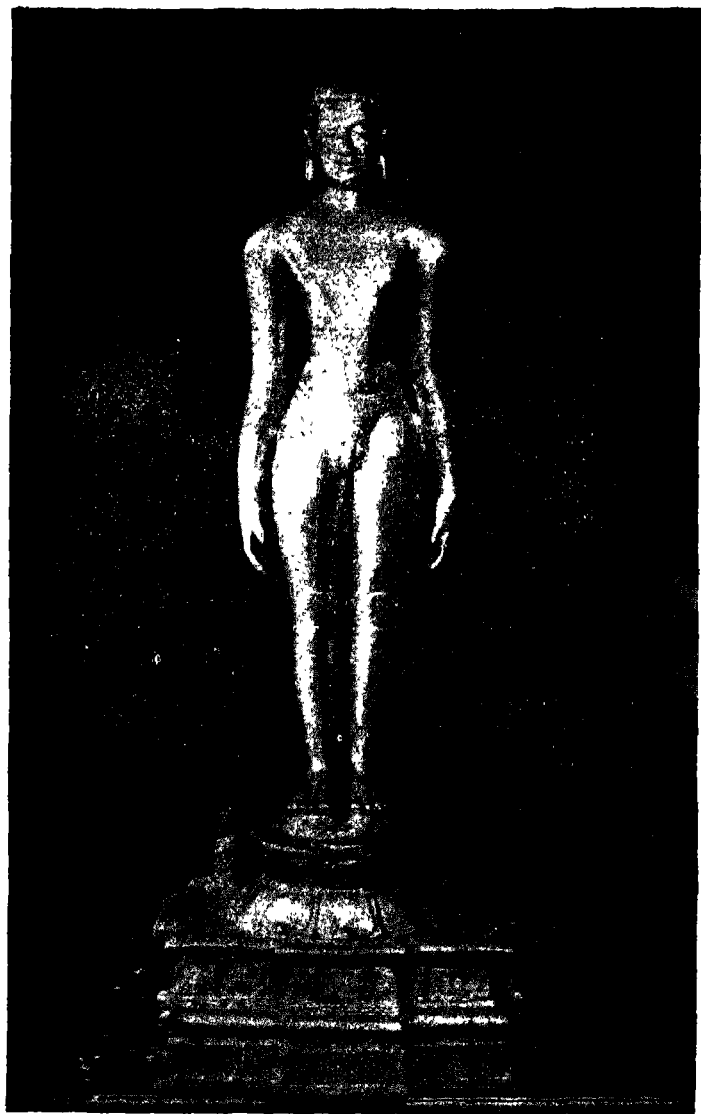
२१ जैन-मठ में स्थित जिनदेव की धातु-मूर्ति

कन्नड में ठवणेकोलु या व्यासपीठ पुस्तक की बैठकी को कहते हैं। प्रस्तुत विग्रह में यह बैठकी (व्यासपीठ) जिनागम अथवा जैन-धर्म-ग्रंथों का प्रतीक है। चैत्य अथवा जिन एक जैनमूर्ति के द्वारा सूचित है। इस विग्रह में चैत्यालय अथवा जैन-मंदिर के प्रतीक के तौर पर एक देवमंडप बना है। मठ की मूर्तियों में से एक धातु की मूर्ति ध्यान देने योग्य है (जिसकी ऊँचाई पाद-पीठ को भी मिला कर दो फुट की है)। यह मूर्ति मंजराबाद (ताल्लुका) के काफ़ी-प्लैंटर स्वर्गीय श्री काफ़र्ड साहब को अपने बगीचे में ज़मीन खोदते समय उपलब्ध हुई थी जिसका उन्होंने इस मठ को दान किया। इस मूर्ति की पादपीठ पर उसके चारों ओर एक ही पंक्ति में कुछ अक्षर लिखे हुए हैं। इस लेख में गंग-नरेश नोळम्ब कुलान्तक मारसिंह की बड़ी बहन कुन्दण सोमिदेवी की प्रशंसा की गयी है। इस मूर्ति की विशेषता यह है कि यह धातु-मूर्ति निश्चित रूप से गंगों के समय की बतायी जा सकती है। मठ की दीवारों पर सुंदर चित्र बनाये गये हैं। उनमें अनेक जिनों और जैन राजाओं की जीवन-संबन्धी घटनाओं के वर्णन हैं। मध्यवर्ती गर्भगृह के दाहिने भाग में एक चित्र-पट्टिका है। उस पर मैसूर नरेश श्रीमान् कृष्णराज ओडेयर तृतीय के समय के दशहरे में लगनेवाले दरबार के दृश्य चित्रित हैं। गर्भगृह की बाईं तरफ़, चित्रपट्टिका के मध्य में,

नेमिनाथ की मूर्ति है। इसके दोनों पार्श्वों में यक्ष और यक्षी हैं। नीचे किसी जैन गुरु का चित्र है जो अपने शिष्यों को उपदेश दे रहा है। उत्तरी दीवार पर पार्श्वनाथ के संवसरण का चित्र है। संवसरण एक स्वर्गीय मंडप माना जाता है जहाँ केवलि या जिन-देव भक्तों को अनन्त ज्ञान का उपदेश देते हैं। दक्षिणी दीवार पर सम्राट् भरत के जीवन संबंधी घटनाओं का वर्णन करनेवाले चित्र अंकित हैं। बायें पार्श्व में दो पट्टिकाओं पर नागकुमार नामक जैन-राजकुमार के जीवन संबंधी घटनाएँ चित्रित हैं। इनमें से एक पट्टिका पर चित्रित वन-दृश्य खास अच्छा बन पड़ा है। दाहिने भाग के वृक्ष के ऊपर या निकट छः व्यक्ति विराजमान हैं। ये जैनों के छः प्रकार के दर्शनों के प्रतीक हैं। मठ की अटारी पर पार्श्वनाथ तथा चौबीस जिनों (तीर्थंकरों) के विग्रह विद्यमान हैं। लोकश्रुति से ज्ञात होता है कि नेमिनाथ, जो चामुंडराय के गुरु थे, इस मठ के प्रथम आचार्य हुए। वर्तमान समय में चारुकीर्ति पंडिताचार्य स्वामी इस मठ के प्रधान धर्म-गुरु हैं।

V

आसपास के गाँव

श्रवणबेळगोळ के निकट हळेबेळगोळ और आसपास के कुछ अन्य गाँवों में भी कई जैन मंदिर हैं। इनमें जिननाथपुर और कंबदहळ्ळि नाम के दो गाँव महत्त्व के हैं। यहाँ के जैन-मंदिर प्राचीन जैन संस्कृति की याद कराते हैं। जिननाथपुर श्रवणबेळगोळ से उत्तर की तरफ़ क़रीब एक मील की दूरी पर पड़ता है। यहाँ आसानी से पहुँच सकते हैं। किसी समय कंबदहळ्ळि वर्तमान बिंडिगनवले ग्राम का एक भाग था। यह स्थान श्रवणबेळगोळ के सीधे पूरब की तरफ़ क़रीब बारह मील पर है और बिंडिगनवले से दक्षिण की ओर क़रीब एक मील पर।

जिननाथपुर होयसळ-नरेश विष्णुवर्धन के सेनापति गंगराज द्वारा १११७ ई० में बसाया गया। शांतिनाथ बस्ती इस स्थान का प्रधान मंदिर है। यहाँ के शांतिनाथ-विग्रह के सिंहासन पर स्थित अभिलेख से जान पड़ता है कि रेचिमय्या ने इसे बनवाया; पीछे चल कर १२०० ई० के लगभग उन्होंने इसे सागरनंदि-सिद्धांत-देव के नाम कर दिया। यह मंदिर होयसळ-शिल्प-कला का एक बहुत सुंदर नमूना है। इसमें एक गर्भगृह है जिससे लगी

४० जिननाथपुर

हुई सुखनासी है। उसके सामने एक भव्य नवरंग है। गर्भगृह में सिंहासन पर शांतिनाथ की एक बड़ी ही सुंदर उत्कीर्ण मूर्ति विराजमान है। गर्भगृह के द्वार पर दोनों भागों में द्वारपालकों की शिला-मूर्तियाँ खड़ी की गयी हैं। नवरंग में सुन्दर मणि-स्तम्भ लगे हुए हैं। उन पर मणियों की पच्चीकारी की गयी है। छत (भुवनेश्वरी) की कारीगरी भी बड़ी सुंदर है। रंगमंडप के ताक़ जो किसी समय मूर्तियों से सुसज्जित थे, अब रिक्त पड़े हैं। बाहरी दीवारों पर बड़ी बड़ी मूर्तियाँ एक पंक्ति में विराजमान हैं। इनमें से कुछ अपूर्ण हैं। मूर्तियों में जिन, यक्ष-यक्षियाँ, ब्रह्मा, सरस्वती, मन्मथ, मोहिनी, ढोलवाले, गायक और नर्तक-नर्तकियाँ हैं।

इस गाँव की अरेगल-बस्ती में पार्श्वनाथ का एक मूल-विग्रह था। वह इस समय पास के एक तालाब के तल में खंडित दशा में पड़ा है। अरेगल बस्ती (मंदिर) में इस समय प्राचीन मूल-विग्रह के स्थान पर संगमरमर की बनी हुई पार्श्वनाथ की एक सुंदर मूर्ति विद्यमान है। बेळगोळ के भुजबलैय्या नामक एक सज्जन ने अपने आत्मानन्द के लिए यह मूर्ति १८८९ ई० में स्थापित करायी।

४१ अरेगल बस्ती

इस गाँव में उपर्युक्त मंदिरों के अतिरिक्त एक जैन-समाधि है जिसे समाधि-मंडप कहते हैं। इस पर एक शिला-

२४ जिननाथपुर : शांतिनाथ बस्ती की दीवार
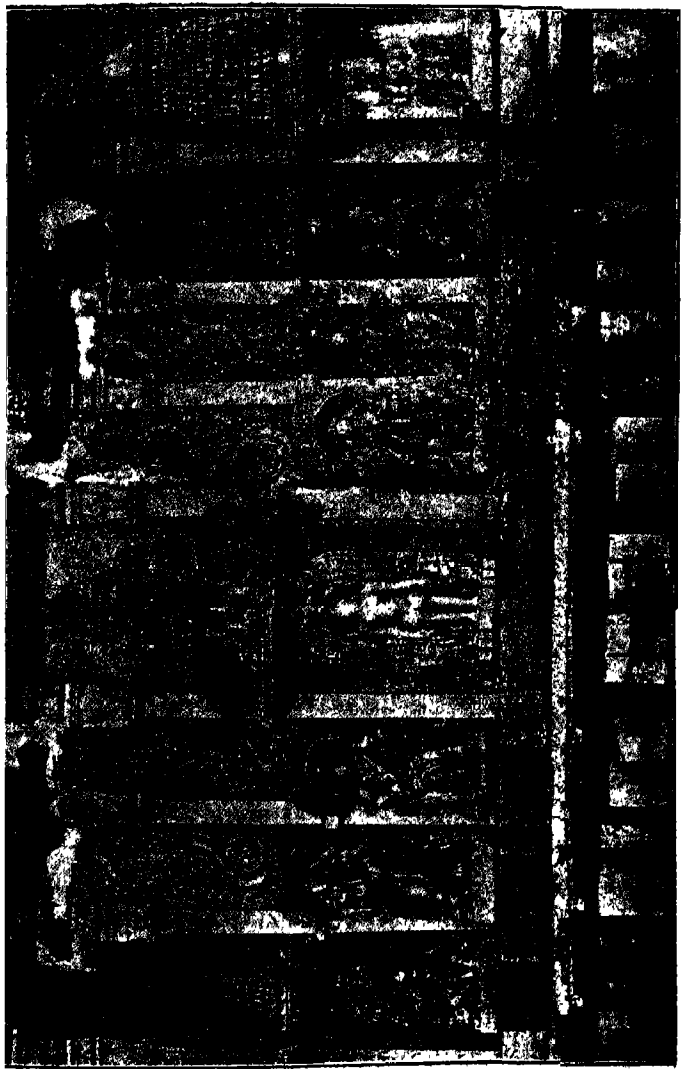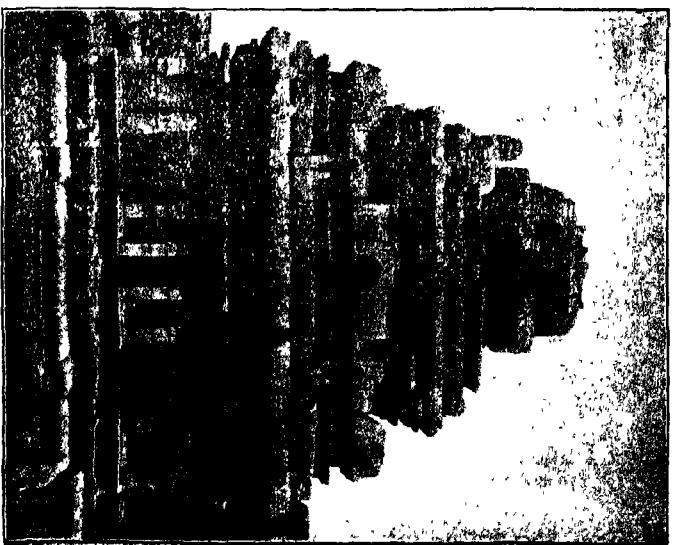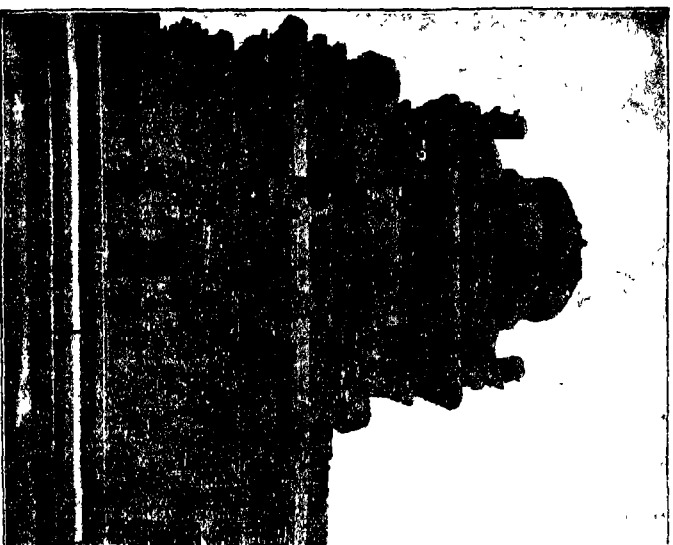
९५ कम्बदहळ्ळि : पंचकूट बस्ती के दो कलश (गोपुर)

लेख है जिसमें बताया गया है कि इसका नाम शिलाकूट है और यह शिलाकूट (शिला-भवन) बालचन्द्रदेव की समाधि है जिन्होंने १२१३ ई० में शरीर-त्याग किया था।

कंबदहळ्ळि (स्तम्भ-ग्राम) के उत्तर-पश्चिम के कोने में एक बहुत ही ऊँचा स्तम्भ है। इसीसे इस गाँव का यह नाम पड़ा। मैसूर राज्य के सब से सुंदर स्तम्भों में इसकी गणना होती है।

४२ कंबदहळ्ळि

स्तम्भ के ऊपर ब्रह्मा की एक उपविष्ट मूर्ति है। इस स्तम्भ के पश्चिम की तरफ़ एक समूह में सात मंदिर दिखाई देते हैं। मैसूर राज्य में कितने ही प्राचीन जैन-स्मारक हैं, जिनमें से ये मंदिर बड़े महत्त्व के हैं। मालूम होता है कि ये मंदिर एक ही समय के बने नहीं हैं; कम से कम तीन भिन्न भिन्न समयों पर बने दीखते हैं। कई बार इन मंदिरों का जीर्णोद्धार हुआ है। मंदिरों के प्रायः सारे भाग कड़े पत्थर के बने हैं।

उपर्युक्त मंदिरों के मध्य में स्थित आदिनाथ-मंदिर सब से प्राचीन है। इसके प्रधान गर्भगृह में आदिनाथ की शिला-मूर्ति है। यह मंदिर उत्तराभिमुखी है और सूची के आकार का त्रिकूटाचल सा दीखता है। मंदिर में तीन गर्भगृह हैं; उनसे लगी हुई तीन खुली सुखनासियाँ हैं जिनसे हो कर हम एक बड़े नवरंग में पहुँचते हैं। नवरंग के द्वार पर द्वारमंडप है। इसके कलश या आमलक भिन्न-भिन्न आकार के हैं। पूरब दिशा का कलश गोळ

और उत्तर का चौकोर है। पश्चिम की ओर का कलश अष्टकोणाकार है।

हर एक कलश के नीचे के चारों मुखों पर फूल कढ़े हैं और घोड़े के नाल के आकारवाली मेहराबें हैं। चारों कलश गुंबज़ जैसे हैं। पूर्व की तरफ़ के कलश का गुंबज़ बौद्धस्तूप जैसा बना है। ताजमहल पर भी ऐसे ही गुंबज़ दिखाई देते हैं। ध्यान देने की बात है, ताजमहल के निर्माण-काल के कम से कम सात सौ वर्ष पहले ही ऐसा गुंबज़ यहाँ बना था। प्रत्येक शिखर का प्रारंभ एक ग्रीवा से होकर, आकर्षक रूप में ऊपर को उठा हुआ है। इसमें सुंदर छोटे छोटे अर्धगोलाकार उभरे हुए खंभे बने हैं। गोपुर की चोटी पर एक बड़ा कमल पुष्प उत्कीर्ण है। शिखरों पर अब गुमटियाँ नहीं हैं। श्रवणबेळगोळ की चामुंडराय बस्ती के ऊपर के गोपुर भी ऐसे ही हैं। नंदी (जिला कोलार, मैसूर राज्य) के भोगनंदीश्वर देवालय के शिखरों का भी यही रूप है। ये शिखर नरसमंगल (ताल्लुका चामराजनगर, मैसूर राज्य) के ईंटों से बने हुए गोपुरों का स्मरण कराते हैं; और कुछ हद तक एलोरा के कैलास-मंदिर तथा मामल्लपुर के धर्मराज-रथ की याद दिलाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ये मंदिर होयसळों के समय से बहुत पहले के हैं। इनका रचना-काल क़रीब ९०० ई० माना जा सकता है।

मंदिर के अंदर कुछ शिलोत्कीर्ण मूर्तियाँ हैं। यहाँ
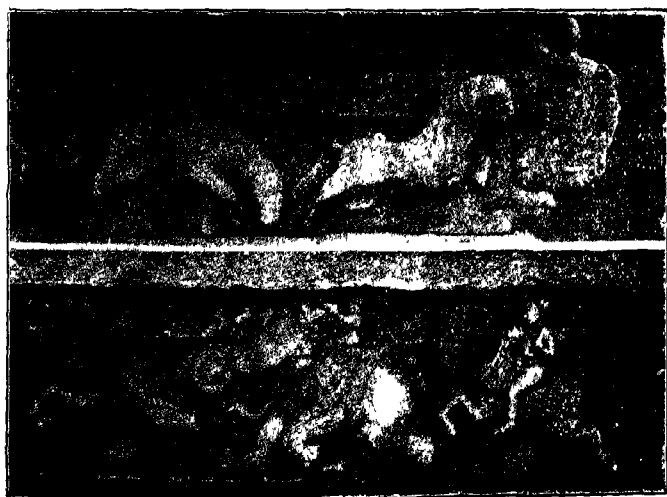
२६ कम्बदहळ्ळि : शांतिनाथ बस्ती के चबूतरे पर की
चित्र-पट्टिका में उत्कीर्ण प्राणियों की पंक्ति

२७ हळेबेळगोळ : चामर-वाहक

इनको छोड़ कर स्थापत्य का अन्य कोई कार्य दिखाई नहीं देता। मंदिर का सारा भाग बिलकुल सादा है। दक्षिण या मध्य गृह में सिंहासन पर मटिया-पत्थर की बनी हुई आदिनाथ स्वामी की शिला-मूर्ति विराजमान है। पूर्व की तरफ़ के गर्भगृह में सिंहासन पर कड़े पत्थर की बनी नेमिनाथ की मूर्ति उपविष्ट है। इसके दोनों पार्श्वों में चँवर-वाहक खड़े हैं। पश्चिमवर्ती गृह में शांतिनाथ स्वामी की सिंहासन-रहित एक प्रस्थर-मूर्ति विद्यमान है।

त्रिकूटाचल के मुखमंडप के सामने से दस फुट की दूरी पर दो (मंदिर-युग्म) जुड़वे-मंदिर हैं, जो एक दूसरे के आमने-सामने बनाये गये हैं। ये मंदिर साधारणतया त्रिकूटाचल के आदिनाथ स्वामी के मंदिर के सदृश बने हैं। पाँचों मंदिरों का यह समूह पंचकूट बस्ती के नाम से विख्यात है। मालूम होता है कि किसी समय इनके चारों तरफ़ प्राचीर-दीवार थी।

उपर्युक्त प्राचीर-दीवार से उत्तर की तरफ़ बीस फुट की दूरी पर एक और विशाल मंदिर है। इसके अंदर शांतिनाथ स्वामी की एक बारह फुट ऊँची शिला-मूर्ति स्थापित है। मंदिर की ऊँची वेदी पर बारीकी से उरेखी हुई एक चित्रपट्टिका है जिस पर तरह तरह के प्राणियों के चित्र अंकित हैं। इनमें से सवारों के साथ घोड़े, हाथी, सिंह और याळियाँ प्रधान हैं। यह चित्रपट्टिका बड़े मार्के की है। इसकी चित्र-कारी किसी भी होयसळ मंदिर के शिल्प-चातुर्य से कहीं ऊँचे

दर्जे की है। इस मंदिर के कोई शिखर नहीं है। संभव है कि राजा विष्णुवर्धन के प्रसिद्ध सेनापति गंगराज के पुत्र बोप्पा ने यह मंदिर बनवाया हो। इस मंदिर का निर्माण बारहवीं शताब्दी के प्रारंभ-काल में हुआ होगा।

जब श्रवणबेळगोळ और कंबदहळ्ळि के बीच का रास्ता सुधर जाय, तब यह आशा की जा सकती है कि कंबदहळ्ळि ग्राम भी जैनियों का एक प्रधान तीर्थ बन जायगा।

४३ हळेबेळगोळ

श्रवणबेळगोळ से उत्तर की तरफ़ चार मील के फ़ासले पर हळेबेळगोळ गाँव पड़ता है। यहाँ एक जिनालय है जिसमें एक गर्भगृह, एक खुली सुखनासी और एक नवरंग तथा मुखमंडप हैं। इसके चारों ओर वेदी से लगे हुए हाथियों के विग्रह काढ़े गये हैं। ऐसा मालूम होता है कि हाथियों पर सारी वेदी स्थित हो। बाहरी दीवारों के बीच बीच में छोटे छोटे गोलाकार उभरे हुए खंभे खुदे हैं और बीच बीच में छोटे छोटे ताक़ भी बने हुए हैं। नवरंग की बीचवाली छत के निचले हिस्से में धरणेन्द्र की एक मूर्ति बड़े सुन्दर ढंग से उत्कीर्ण की गयी है। इसके एक हाथ में शंख और दूसरे हाथ में धनुष पकड़ाये गये हैं। सिर पर पाँच फनवाला सर्पराज फन फैलाये हुए छत्र धारण किया हुआ सा है। चारों ओर अष्ट दिक्पालकों की मूर्तियाँ बना कर रखी गयी हैं। डेवढ़ी पर दो चामरवाहकों की खंडित मूर्तियाँ

देखने में आती हैं। नवरंग में एक खंडित जिन-मूर्ति पायी जाती है। सारा मंदिर जीर्णावस्था में है। ऐसा मालूम होता है कि इस गाँव में और भी अनेकों मंदिर किसी समय रहे होंगे। यह बात पास के तालाब के अतिरिक्त जल के निकास के लिए बने हुए नाले की बनावट से मालूम होती है जो पुराने मंदिरों की शिलाओं से बना हुआ है। गाँव के बीच की झील के चारों ओर बिखरे पड़े हुए शिला-खण्डों से भी इस बात का अनुमान स्थिर होता है कि किसी समय यहाँ अनेकों मंदिर रहे होंगे।

MYSORE STATE
SCALE OF MILES
10 0 10 20 30 40 50
DHARWAR
GADAG
HUBLI
GUNTAKAL
SANDUR
BELLARY
GOOTY
BELLARY
BRAHMAGIRI
R. PENNAR
HAVERI
HARAPANAHALLI
DHARWAR
CANARA
NORTH
SIRSI
BANAVASI
KUBATUR
RANIBENNUR
HARIHAR
DAVANGERE
MOLAKALMURU
RAYADURGA
KALYANDURGA
ANANTAPUR
DHARMAVARAM
ANANTAPUR
TALGUNDA
SORAB
BELGAMVE
SHIRALKOPPA
SIDDAPUR
HONAVAR
KELADI
SHIKARPUR
HONNALI
CHITRADURGA
SAGAR
IKKERI
BHATKAL
PAVUGADA
PENUKONDA
CUDDAPAH
CHANNAGIRI
HOLALKERE
HIRIYUR
SHIMOGA
BHADRAVATI
AMRITAPURA
HINDUPUR
THIRTHAHALLI
TARIKERE
BIRUR
SIRA
MADHUGIRI
KADUR
NARASIMHARAJAPURA
MADANAPALLE
AGUMBE
SRINGERI
BANAVARA
ARSIKERE
TUMKUR
CHIKBALLAPUR
CHINTAMANI
NANDI
CHIKMAGALUR
BELAVADI
HALEBID
BELUR
KAIDALA
KURUDUMALE
SIVAGANGA
NELAMANGALA
MULBAGAL
HASSAN
KUNIGAL
HOSKOTE
KOLAR
AVANI
BETAMANGALA
GOLD MINES
MAGADI
BANGALORE
BOWRINGPET
MOSALE
KAMBADAHALLI
HAVANBELGOLA
NAGAMANGALA
HOLENARSIPUR
KRISHNARAJAPET
MELKOTE
CHANNAPATNA
MADDUR
MANDYA
KANKANHALLI
PANDAVAPURA
MALAVALLI
MYSORE
SIVASAMUDRAM
TALKAD
T. NARSIPUR
BELAKAVADI
HEGGADADEVANKOTE
NANJANGUD
YELANDUR
CANNANORE
CHAMARAJANAGAR
GUNDLUPET
TALACHERY
MAHE
NILGIRI
OOTACAMUND
SALEM
CHITTUR
SEA

२८ मैसूर का नक्शा